# छत्तीसगढ़ में जलवायु अनुकूल कृषि प्रशिक्षण कार्यक्रम

## (छत्तीसगढ़ का मैदानी भाग)

# विषय–सूची


| | | |
|---|---|---|
| **प्रस्तावना** | | 1 |
| 1 | जलवायु परिवर्तन एवं कृषि पर प्रभाव | 2 |
| 1.1 | जलवायु परिवर्तन के कारण | 2 |
| 1.2 | जलवायु परिवर्तन का प्रभाव | 4 |
| 1.3. | छत्तीसगढ़ राज्य का सामान्य जलवायु | 5 |
| 1.4. | छत्तीसगढ़ का कृषि जलवायु क्षेत्र | 5 |
| 1.5. | छत्तीसगढ़ के सदर्भ में जलवायु परिवर्तन | 6 |
| 1.6. | छत्तीसगढ़ के मैदान के कृषि जलवायु क्षेत्र के सामान्य आंकड़े | 7 |
| **2. छत्तीसगढ़ के मैदान का फसल स्वरुप/सस्य क्रम** | | 8 |
| **3. जलवायु अनुकूल कृषि तकनीक** | | 12 |
| 3.1. | जलवायु अनुकुल खेती के लिए नई तकनीकी, किस्मे और फसले | 12 |
| 32. | जल प्रबंधन और सिंचाई | 12 |
| 3.3. | फसलोत्पादन प्रबंधन | 12 |
| 3.4. | बीमा | 12 |
| **4 जलवायु अनुकूलन में समन्वित कृषि प्रणाली का महत्व** | | 14 |
| 4.1 | समन्वित कृषि प्रणाली के उद्देश्य | 14 |
| 4.2 | समन्वित कृषि प्रणाली | 14 |
| 4.3 | सफलता की कहानी | 15 |
| **5. जलवायु अनुकूलन में जल ग्रहण प्रबंधन की आवश्यकता एवं महत्व** | | 16 |
| 5.1 | जल ग्रहण प्रबंधन एवं भू–जल संवर्धन | 16 |
| 5.2 | सतही जल तथा भू–जल संवर्धन के मुख्य बिन्दु | 17 |
| 5.3 | जलग्रहण क्षेत्रो में फसल उत्पादन हेतु कृषकों द्वारा अपनाई जाने वाली क्रियाएं– | 17 |
| 5.4 | केस स्टडी | 18 |
| **6. महात्मा गॉधी नरेगा के माध्यम से जलवायु संवेदनशील विकास हेतु अधोसंरचना निर्माण** | | 20 |
| **संलंग्क–1 छत्तीसगढ़ की मुख्य फसल पद्धतियाँ** | | 26 |

# प्रशिक्षण सामग्री विवरण

| क्रमांक | विषय | लेखक |
|---|---|---|
| 1 | जलवायु परिवर्तन एवं कृषि पर प्रभाव | डॉ.गोपी कृष्ण दास, विभागाध्यक्ष<br>कृषि मौसम विज्ञान विभाग,<br>ई.गां.कृ.वि.वि.रायपुर (छ.ग.) |
| 2 | छत्तीसगढ़ के मैदान का फसल स्वरुप/सस्य क्रम | डॉ.गोपी कृष्ण दास, विभागाध्यक्ष<br>कृषि मौसम विज्ञान विभाग,<br>ई.गां.कृ.वि.वि.रायपुर (छ.ग.) |
| 3 | जलवायु अनुकूल कृषि तकनीक | डॉ.आर.के.द्विवेदी, अधिष्ठाता,<br>संत कबीर कृषि महाविद्यालय<br>एवं अनुसंधान केन्द्र, कवर्धा |
| 4 | जलवायु अनुकूलन में समन्वित कृषि<br>प्रणाली का महत्व | डॉ.चंद्रेश चंद्राकर, सहायक प्राध्यापक,<br>संत कबीर कृषि महाविद्यालय एवं<br>अनुसंधान केन्द्र, कवर्धा |
| 5 | जलवायु अनुकूलन में जल ग्रहण प्रबंधन की<br>आवश्यकता एवं महत्व | डॉ.बी.पी.त्रिपाठी, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं<br>प्रमुख कृषि विज्ञान केन्द्र, कवर्धा |
| 6 | महात्मा गॉधी नरेगा के माध्यम से जलवायु<br>संवेदनशील विकास हेतु अधोसंरचना निर्माण | इन्फ्रास्ट्रचर फॉर क्लाइमेट रेसिलिएंट<br>ग्रोथ (आई.सी.आर.जी.) कार्यक्रम टीम |

# प्रस्तावना

फसल प्रजातियों एवं उनके भौगोलिक वितरण की उत्पादकता जलवायु परिर्वतन से प्रभावित हो रही है। जलवायु परिवर्तन में प्रमुख योगदान कारकों में बढते वायुमड़लीय कार्बन डाइआक्साइड, बढ़ते तापमान इत्यादि है। इन कारकों के कारण संभवतः अधिक सुखे और बाढ की समस्याए निर्मित हो रही है। छत्तीसगढ़ में विगत वर्षों में वर्षा वितरण असमान रहा है जिसके कारण किसानो को फसलोत्पादन में विभिन्न जैविक एवं अजैविक कारकों सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ा है।

छत्तीसगढ़ के मैदान के 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या का जीवकोपार्जन फसल और पशुपालन वनीकरण और वन्य कृषि, मत्स्य पालन और कृषि उद्योग सहित कृषि पर निर्भर है। इस प्रशिक्षण पुस्तिका का उद्देश्य छत्तीसगढ़ के किसानो में जलवायु परिवर्तन से कृषि में होने वाल प्रभाव के बारे में जानकारी देना है एवं जलवायु परिवर्तन से होने वाले नुकसान से निपटने के लिए कृषि विज्ञानिको द्वारा जलवायु अनुकूल कृषि करने हेतु सुझावों का विवरण है

# 1. जलवायु परिवर्तन एवं कृषि पर प्रभाव

हमें गर्मी के मौसम में गर्मी व सर्दी के मौसम में ठण्ड लगती है। ये सब कुछ मौसम में होने वाले बदलाव के कारण होता है। मौसम, किसी भी स्थान की औसत जलवायु होती है जिसे कुछ समयावधि के लिये वहां अनुभव किया जाता है। इस मौसम को तय करने वाले मानकों में वर्षा, सूर्य प्रकाश, हवा, नमी व तापमान प्रमुख हैं। मौसम में बदलाव काफी जल्दी होता है लेकिन जलवायु में बदलाव आने में काफी समय लगता है और इसीलिए ये कम दिखाई देते हैं। इस समय पृथ्वी के जलवायु में परिवर्तन हो रहा है और सभी जीवित प्राणियों ने इस बदलाव के साथ सामंजस्य भी बैठा लिया है परंतु पिछले 150–200 वर्षों में ये जलवायु परिवर्तन इतनी तेजी से हुआ है कि प्राणी व वनस्पति जगत को इस बदलाव के साथ सामंजस्य बैठा पाने में मुश्किल हो रही है। इस परिवर्तन के लिये एक प्रकार से मानवीय क्रिया–कलाप ही जिम्मेदार है।

## 1.1 जलवायु परिवर्तन के कारण

जलवायु परिवर्तन के कारणों को दो भागों में बांटा जा सकता है– प्राकृतिक व मानव निर्मित

### अ.प्राकृतिक कारण

जलवायु परिवर्तन के लिये अनेक प्राकृतिक कारण जिम्मेदार हैं। इनमें से प्रमुख हैं– महाद्वीपों का खिसकना, ज्वालामुखी, सौरऊर्जा का उत्पादन, प्लेट टेक्टोनिक्स, पृथ्वी की कक्षा में बदलाव समुद्री तरंगें और महासागर–वायुमंडलीय परिवर्तनशीलता।

### ब.मानवीय कारण

**ग्रीन हाउस प्रभाव**

पृथ्वी द्वारा सूर्य से ऊर्जा ग्रहण की जाती है जिसके चलते धरती की सतह गर्म हो जाती है। जब ये ऊर्जा वातावरण से होकर गुजरती है, तो कुछ मात्रा में, लगभग 30 प्रतिशत ऊर्जा वातावरण में ही रह जाती है। इस ऊर्जा का कुछ भाग धरती की सतह तथा समुद्र के जरिये परावर्तित होकर पुनः वातावरण में चला जाता है। वातावरण की कुछ गैसों द्वारा पूरी पृथ्वी पर एक परत सी बना ली जाती है व वे इस ऊर्जा का कुछ भाग भी सोख लेते हैं। इन गैसों में शामिल होती है कार्बन डाइऑक्साइड, मिथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, व जल कण, जो वातावरण के 1 प्रतिशत से भी कम भाग में होते है।

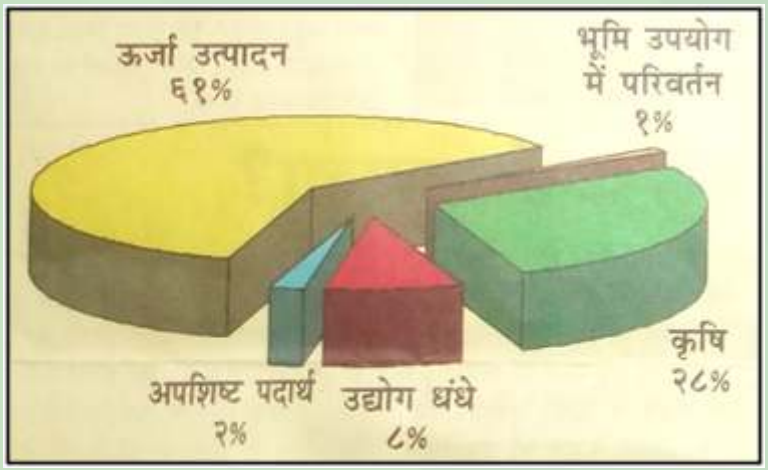


मानवीय गतिविधियों के कारण उत्सर्जित गैस की प्रतिशत मात्रा( IPCC: 2014)

इन गैसों को ग्रीन हाउस गैसें भी कहते हैं। जिस प्रकार से हरे रंग का कांच ऊष्मा को अन्दर आने से रोकता है, कुछ इसी प्रकार से ये गैसें, पृथ्वी के ऊपर एक परत बनाकर अधिक ऊष्मा से इसकी रक्षा करती है। इसी कारण इसे ग्रीन हाउस प्रभाव कहा जाता है।

ग्रीन हाउस गैसों की परत पृथ्वी पर इसकी उत्पत्ति के समय से है। चूंकि अधिक मानवीय क्रिया–कलापों के कारण इस प्रकार की अधिकाधिक गैसें वातावरण में छोड़ी जा रही है जिससे ये परत मोटी होती जा रही है व प्राकृतिक ग्रीन हाउस का प्रभाव समाप्त हो रहा है।

कार्बन डाइअक्साइड तब बनती है जब हम किसी भी प्रकार का ईंधन जलाते हैं, जैसे– कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस आदि। इसके बाद हम वृक्षों को भी नष्ट कर रहे है, ऐसे में वृक्षों में संचित कार्बन डाइऑक्साइड भी वातावरण में जा मिलती है। खेती के कामों में वृद्धि, जमीन के उपयोग में विविधता व अन्य कई स्रोतों के कारण वातावरण में मिथेन और नाइट्रस ऑक्साइड गैस का स्राव भी अधिक मात्रा में होता है। औद्योगिक कारणों से भी नवीन ग्रीन हाउस प्रभाव की गैसें वातावरण में स्रावित हो रही है, जैसे क्लोरोफ्लोरोकार्बन, जबकि ऑटोमोबाईल से निकलने वाले धुंए के कारण ओजोन परत के निर्माण से संबद्ध गैसें निकलती है। इस प्रकार के परिवर्तनों से सामान्यतः वैश्विक तापन अथवा जलवायु में परिवर्तन जैसे परिणाम परिलक्षित होते हैं।

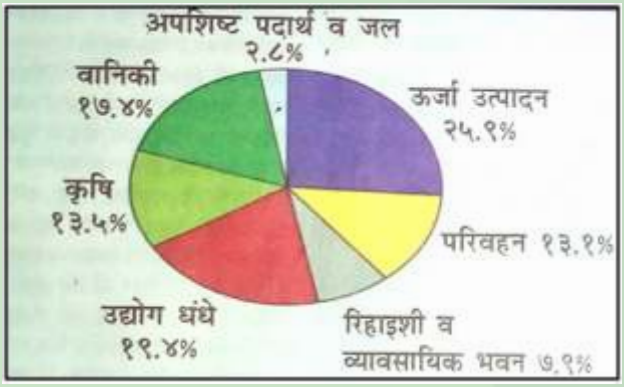


IPCC: 2007

### हम ग्रीन हाउस गैसों में किस प्रकार अपना योगदान देते हैं?

- कोयला, पेट्रोल आदि जीवाष्म ईंधन का उपयोग कर।
- अधिक जमीन की चाहत में हम पेड़ों को काटकर।
- अपघटित न हो सकने वाले समान अर्थात प्लास्टिक का अधिकाधिक उपयोग कर।
- खेती में उर्वरक व कीटनाशकों का अधिकाधिक प्रयोग कर।

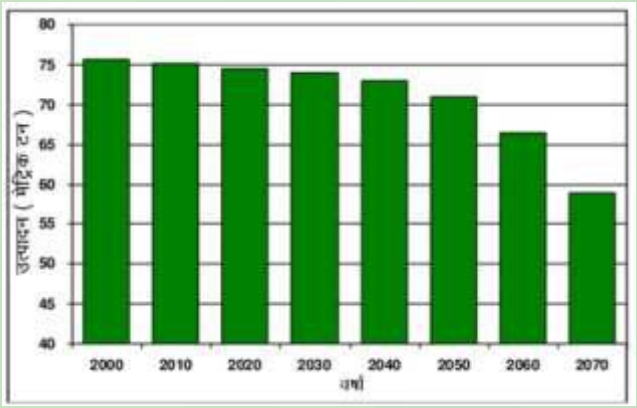


भारत में गेहूँ उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन का संभावित असर

## 1.2 जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

जलवायु परिवर्तन से मानव पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। 19वीं सदी के बाद से पृथ्वी की सतह का सकल तापमान 03 से 06 डिग्री तक बढ़ गया है। ये तापमान में वृद्धि के आंकड़े हमें मामूली लग सकते हैं लेकिन ये आगे चलकर महाविनाश को आकार देंगे, जैसा कि नीचे बताया गया है–

**जलवायु परिवर्तन का प्रभाव**

| जलवायु तत्व पर प्रभाव | मानव पर प्रभाव | जलवायु परिवर्तन का प्रभाव |
|---|---|---|
| समुद्र के जल स्तर बढ़ना<br>बाढ़<br>समुद्री लहरे<br>क्षरण<br>(भूमि व जल में लवण) | भूमि की कमी<br>डूबने से क्षति<br>पानी की कमी<br>तटीय बुनियादी संरचना में क्षति।<br>कृषि भूमि व पशुओं की क्षति<br>पर्यटन पर खतरा व समुद्र तट की कमी | गरीबी में वृद्धि |
| तापमान में वृद्धि<br>बीमारियों के वेक्टर<br>कोरल में कमी<br>मत्स्य पालन पर प्रभाव | बिमारियों का फैलना।<br>पारंपरिक मछली पालन में परिवर्तन | उत्पादकता में कमी– सभी<br>उत्पादकता में कमी<br><br>कृषि<br>पशुओं<br>मछली |
| अधिक तीव्रता के चक्रवात<br>मानसून में कमी<br>वर्षा में लंबा अंतराल<br>मानसून का शीघ्र वापसी | जनसंख्या का विकेन्द्रीकरण<br>जल प्रदूषण<br>संपति की हानि, चिकित्सा में<br>देरी व भोजन की कमी।<br>मनोवैज्ञानिक परेशानी | भोजन व स्वास्थ में खतरा |
| वर्षा में बदलाव<br>रोग वैक्टर में परिवर्तन<br>क्षरण | बीमारी का प्रकोप – दोनों फसलों<br>और पेड़ों और मनुष्यों में<br>कृषि मिट्टी की कमी | नई स्वास्थ्य समस्याओं |

## 1.3 छत्तीसगढ़ राज्य का सामान्य जलवायु

छत्तीसगढ़ राज्य की जलवायु उप आर्द्र श्रेणी के अंतर्गत आती है। राज्य में औसत वार्षिक वर्षा 1200 से 1400 मि.मी. तक होती है, जिसमें लगभग 64 वर्षा दिवस होते है। वार्षिक वर्षा का लगभग 85 फीसदी हिस्सा दक्षिण–पश्चिम मानसून (जून–सितम्बर) और शेष 15 फीसदी हिस्सा उत्तर–पूर्व मानसून, ग्रीष्म और सर्दियो के मौसम में प्राप्त होता है। जुलाई एवं अगस्त नम महीने है। पूर्वोत्तर मानसून के मौसम (अक्टूबर–दिसंबर) के दौरान राज्य के दक्षिणी भाग में वर्षा की महत्वपूर्ण मात्रा प्राप्त होती है। मानसून लगभग 10 जून को बस्तर क्षेत्र में और 25 जून तक पूरे राज्य में आ जाता है। राज्य को तीन कृषि जलवायु क्षेत्र में बांटा गया हैं। जिसमें उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र, छत्तीसगढ़ का मैदानी क्षेत्र और बस्तर के पठार शामिल है। यदि देखा जाए तो तीनों कृषि जलवायु क्षेत्र मे सर्वाधिक वर्षा बस्तर का पठार (1240 मि.मी) क्षेत्र में उसके पश्चात् उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र में (1230 मि.मी) और सबसे कम छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्र में (1100 मि.मी) होती है। प्रदेश के बस्तर जिले में सर्वाधिक वार्षिक वर्षा (1400 मि.मी) तथा कबीरधाम जिले में सबसे कम (900 मि.मी) वर्षा दर्ज की गई है। गर्मी के दिनो में तापमान 30 से 47°C एवं सर्दी के दिनो में तापमान 5 से 25°C के बीच रहता है। प्रदेश के सरगुजा जिले के मैनपाट में 0°C से कम तापमान दर्ज किया जाता है, वंही सर्वाधिक तापमान 48.3°C रायगढ़ जिले में दर्ज किया गया है। प्रदेश में अप्रैल से जून के माह तक तापमान मे वृद्धि होती रहती है, एवं मानसून की शुरूवात से कम होता जाता है। सर्दी की स्थिति मध्य नवंबर में आ जाती है , इस दौरान औसत न्यूनतम तापमान 15°C से नीचे होता है। दक्षिणी भागो की तुलना में राज्य के उत्तरी भागों में सर्दी अधिक और लंबे समय तकरहती हैं। वायुमण्डलीय आर्द्रता मानसून के महिनों के दौरान बहुत अधिक (>90:) एवं अक्टूबर के माह से कम होने लगती है, तथा गर्मियों के महीनो में 15–20% तक हो जाती है। राज्य में मुख्य रूप से तीन प्रकार की जलवायु जैसे – नम उप आर्द्र, शुष्क उप आर्द्र एवं अर्ध शुष्क पायी जाती है। राज्य का अधिकांश क्षेत्र शुष्क उप आर्द्र जलवायु के अंतर्गत आता है। मात्र बीजापुर जिला नम उप आर्द्र जलवायु के अंतर्गत आता है, और कबीरधाम, बेमेतरा, दुर्ग, बालोद, धमतरी, महासमुंद और कांकरे जिला शुष्क उप आर्द्र जलवायु के अंतर्गत आते है।

## 1.4 छत्तीसगढ़ का कृषि जलवायु क्षेत्र

जलवायु, मृदा, भूमि और क्षेत्रिय स्थलाकृति के आधार पर राज्य को तीन कृषि जलवायु क्षेत्रो (1) छत्तीसगढ़ का मैदानी क्षेत्र (2) बस्तर का पठार (3) उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र में बाटा गया है। छत्तीसगढ़ के विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रो के अंतर्गत आने वाले जिलों को चित्र एवं तालिका में दर्शाया गया है।

## कृषि जलवायु क्षेत्र का विवरण

| कृषि जलवायु जोन | जिले शामिल | कुल जियो. क्षेत्र | कुल बुवाई क्षेत्र | मिट्टी के प्रकार | सिंचाई | फसल तीव्रता |
|---|---|---|---|---|---|---|
| सी.जी. मैदानों (15 जिलों) | रायपुर, गरियाबंद, बलोदा बाजार, महासमुंद, धमतरी, दुर्ग, बालोद, बेमेतरा, राजनांदगांव, कबीरधाम, बिलासपुर, मुंगेली, कोरबा, जांजगीर–चांपा, रायगढ़ और कांकेर जिले का एक हिस्सा (नरहरपुर औरकांकेर ब्लॉक) | 68.49 लाख हेक्टेयर। (50%) | 32.95 लाख हेक्टेयर। | एंटीसॉल (भाठा)–36%; अल्फिसोल (मतस्यी)–21%; इन्सेप्टिसोल (ढोर्सा)–22%; वर्टिसोल (कन्हार)–8 %; अल्लीउविअल (कछार)–3% | 43% | 139 |
| बस्तर के पठार (7 जिलों ) | जगदलपुर, नारायणपुर, बीजापुर, कोंडागांव, दंतेवाड़ा, सुकमा और कांकेर जिलों के शेष भाग | 39.06 लाख हेक्टेयर। (29:) | 10.00 लाख हेक्टेयर। | एंटीसॉल –26% अल्फिसोल)25%, इन्सेप्टिसोल34%, वर्टिसोल–10%, अल्लीउविअल5% | 5% | 122 |
| उत्तरी हिल्स (5 जिलों) | सरगुजा, सूरजपुर, बलरामपुर, कोरिया, रायगढ़ जिलों के जशपुर और धरमजयगढ़ तहसील | 28.47 लाख हेक्टेयर। (21:) | 8.35 लाख हेक्टेयर। | एंटीसॉल 3%, अल्फिसोल) 29% इन्सेप्टिसोल28% वर्टिसोल–28%, अल्लीउविअल2% | 11% | 135 |

### 1.5 छत्तीसगढ़ के सदर्भ में जलवायु परिवर्तनः–

1. छत्तीसगढ़ राज्य में वार्षिक औसत अधिकतम तापमान समय श्रंखला में वृद्धि दर्ज की गई है।
2. वार्षिक औसत न्यूनतम तापमान श्रखंला छत्तीसगढ़ में कमी देखी गई है। (–0.01°C / वर्ष)
3. छत्तीसगढ़ में औसत वार्षिक वर्षा में कमी आई है।
4. सर्दी के मौसम में वर्षा की प्रवृत्तियों में वृद्धि दर्ज की गई है।
5. गर्मी के मौसम में छत्तीसगढ़ में वर्षा वृद्धि दर्ज की गई है।
6. मानसून के दौरान औसत न्यूनतम तापमान कम होने की श्रंखला देखी गई है। (–0.01°C / वर्ष)
7. छत्तीसगढ़ में मानसून के दौरान वर्षा की कमी देखी गई है।

## छत्तीसगढ़ के कृषि जलवायु क्षेत्र

## 1.6 छत्तीसगढ़ के मैदान के कृषि जलवायु क्षेत्र के सामान्य आंकड़े

तलिका में दर्षित आंकड़ो के अध्ययन के निष्कर्ष के आधार पर राज्य के अलग–अलग कृषि जलवायु क्षेत्र में मौसम पैरामीटर में व्यापक बदलाव के संकेत मिलते है। कृषि विष्वविद्यालय रायपुर में स्थित कृषि मौसम वेधषाला के पिछले कई वर्षो के दैनिक आंकड़ो का विष्लेषण करने से यह पता चलता है कि यहां मई के माह में सर्वाधिक अधिकतम तापमान दर्ज किया गया वही दिसबंर माह में सबसे कम न्यूनतम तापमान दर्ज किया गया यदि वर्षा के आंकड़ों का अध्ययन करें तो रायपुर में सर्वाधिक वर्षा जुलाई के माह में दर्ज की गई तथा वर्षा के सर्वाधिक दिवस भी जुलाई माह में दर्ज किये गये है। हवा की गति सर्वाधिक जून माह में एवं अधिकतम आर्द्रता जुलाई में तथा न्यूनतम आर्द्रता मार्च एवं अप्रैल माह में दर्ज की गई। आंकड़ों का विष्लेषण करने पर यह पाया गया की 5 मई 1973 को सर्वाधिक अधिकतम तापमान एवं 29 दिसम्बर 1902 को सबसे कम न्यूनतम तापमान तथा 8 अगस्त 1910 को सर्वाधिक वर्षा दर्ज की गई, जिसे हम चरम घटना की श्रेणी में रखते है।

उपरोक्त आंकड़ों के विस्तृत अध्ययनों से प्राप्त निष्कषों के आधार पर वैज्ञानिकध्कृषि अधिकारीध्व्यवस्थापक और कृषक समुदाय फसल योजना तैयार कर सकते है। सामान्य जलवायु पर चरम मौसम की घटनाओं के तहत् विभिन्न जलवायु क्षेत्र के लिए आकस्मिक कार्य योजना तैयार कर सकते है। यह जानकारी संबधित क्षेत्र के लिए कृषि परामर्ष बुलेटिन बनाने में भी उपयोगी होती है।

### रायपुर के सामान्य आंकड़े

| पैरामीटर | जनवरी | फरवरी | मार्च | अप्रैल | मई | जून | जुलाई | अगस्त | सितम्बर | अक्टूबर | नवम्बर | दिसम्बर | चरम |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| अधिकतम तापमान | 27.5° | 31.1° | 39.6° | 39.6° | 42.0° | 37.4° | 30.8° | 30.2° | 31.3° | 31.6° | 29.6° | 27.3° | 47.1° (10.5.1973) |
| न्यूनतम तापमान | 13.3° | 16.5° | 25.3° | 25.3° | 28.3° | 26.5° | 23.9° | 23.9° | 23.9° | 21.5° | 16.5° | 13.2° | 3.9° (29.12.1902) |
| वर्षा (मि .मी.) | 6.7 | 12.3 | 15.7 | 16.7 | 18.8 | 189.8 | 344.7 | 230.2 | 230.2 | 53.9 | 7.4 | 3.7 | 370.3 (4.8.1910) |
| वर्षा का दिन | 1 | 1 | 2 | 2 | 2 | 9 | 16 | 10 | 10 | 4 | 1 | 0 | . |
| हवा की गति | 4.0 | 5.1 | 8.0 | 8.0 | 9.3 | 10.9 | 9.3 | 7.1 | 7.1 | 4.9 | 3.9 | 3.2 | . |
| अधिकतम . आर्द्रता | 60 | 51 | 39 | 39 | 39 | 64 | 87 | 81 | 81 | 71 | 62 | 61 | . |
| न्यूनतम आर्द्रता | 39 | 30 | 23 | 23 | 23 | 51 | 78 | 72 | 72 | 56 | 45 | 43 | . |

# 2. छत्तीसगढ़ का मैदान में फसल स्वरुप/सस्य क्रम

**परिभाषाः**— यह विभिन्न फसलों को उगाने का तरीका है। कभी—कभी विभिन्न फसलों को एक साथ उगाया जाता है या वह एक ही खेत में क अन्तराल पर अलग—अलग भी उगाये जाते है। फसल पद्धति का आशय, नीचे लिखे वर्गीकरण से स्पष्ट हो जाता है—

**1 छत्तीसगढ़ के मैदान में प्रचलित फसल स्वरुप/सस्य क्रम—**

- धान—गेहूँ—मुंग
- धान—तिवड़ा
- धान—चना—मुंग
- धान—सरसों/सुरजमुखी—मुंग
- सोयाबीन—गेहूँ—सुरजमुखी/मुंग
- सोयाबीन—चना—सब्जी
- मुंगफली—गेहूँ—मुंग

**फसल पद्धति के प्रकार**

(1) मिश्रित सस्यन

1 मिश्रित फसलें 2) सहचर फसलें 3) रक्षक फसलें 4) सहायक फसलें

**(2) सघन खेती के दो प्रकार है .**

2.1 बहुफसली खेती अ) अविराम खेती ब) उतेरा खेती

2.2 अन्तर्वर्ती खेती (अ) समान्तर खेती (ब) सहचर खेती (स) सह—क्रियावादी खेती (द) बहुमंजली खेती

## छत्तीसगढ़ के मैदान में प्रचलित कुछ मिश्रित फसलें

छत्तीसगढ़ राज्य में मिश्रित फसलों की खेती काफी प्रचलन में है। राज्य चूँकि जनजातीय बाहुल्य है एवं यहाँ किसानों के पास सीमित भूमि है, अतः किसान अपने पास उपलब्ध सीमित क्षेत्र में ही अपनी आवश्यकता की फसलें उगाता है, इनमें से कुछ प्रमुख फसल मिश्रण इस प्रकार है—

**(अ) खरीफ—**

1. उच्च्हन धान+अरहर/उड़दध्लाल पटवा (अम्बाड़ी)
2. लघु धान्य की फसलें जैसे—कोदो, कुटकी, रागी या साँवा के साथ अरहर/उड़द।
3. राममिल+उड़द।
4. मक्का+ज्वार+बरबटी+अम्बाड़ी।
5. कंद वाली फसलें, जैसे — अरबी, टैपियोका, शकरकंद, रतालू या जिमी कंद के साथ सब्जियाँ जैसे— बरबटी एवं हरी भाजियाँ आदि।
6. रामतिल+कुल्थी।

**(ब) रबी—**

7. तोरिया+कुल्थी।
8. तोरया+मूली+लालभाजी(चौलाई)।
9. गेहूँ+चना/राई/मटर।
10. सूर्यमुखी+बैगन।

**(स) जायद—**

11. कद्दूवर्गीय सब्जियाँ+ चौलाई भाजी।
12. तिल+ मूँग।

## मिश्रित सस्यन के लाभ—

**फसल मिश्रण या मिश्रित फसलों से निम्न प्रमुख लाभ है—**

**1.** विपरीत जलवायु की परिस्थितियों के कारण सभी फसलें असफल नहीं होती है जैसे— पाले से केवल दलहनी फसले प्रभावित होती है, अतिवृष्टि या बाढ़ से केवल दलहनी फसलें नष्ट होती है एवं अल्पवृष्टि या सूखे से केवल अदलहनी या उथली जड़ वाली फसलें असफल होती है। इस प्रकार, किसान को कोई—न कोई फसल अवश्य मिल जाती है, जबकि शुद्ध फसलों की खेती में पूरी फसल के नष्ट होने की संभावना रहती है।

**2.** किसी कीड़ा या बीमारी के महामारी का रूप धारण कर लेने की स्थिति में भी केवल एक ही फसल प्रभावित होगी, जबकि अन्य बची फसलों के किसान को उपज प्राप्त होगी।

3. मिश्रित फसलें उगाने से किसान की दैनिक आवश्यकताओं जैसे–अनाज, दाल, एवं तेल वाली फसलों की पूर्ति हो जाती है।
4. मिश्रित फसलें, मृदा क्षरण एवं खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण रखते है।
5. मृदा उर्वरक बनी रहती है या उसमें सुधर होता है।
6. किसान के पास उपलब्ध संसाधनों जैसे–श्रम, भूमि, पूंजी, सिंचाई, खाद एवं उर्वरक इत्यादि का सचुचित उपयोग होता रहता है।
7. मिश्रित फसलों से कुछ उत्पादन ज्यादा मिलता है।
8. फसलों के उत्पादन लागत में कमी आती है।
9. सीमित भूमि से अधिक फसलें ली जा सकती है।
10. फसलों को मिश्रित रूप में उगाने से, उनकों पशुओं व जंगली जानवरो से रक्षा की जा सकती है।
11. मिश्रित फसलें उगाने से कीड़े एवं बीमारियों का प्रकोप कम होता है।
12. मृदा की संरचना सुधरती है।
13. कृषक को वर्ष में कई बार आय प्राप्त होती है।
14. मिश्रित फसलों से किसान को पौष्टिक चारे की भी पूर्ति हो जाती है।

## मिश्रित सस्यन की हानियाँ

**पूर्व उल्लेखित लाभों के साथ मिश्रित फसलों से कुछ हानियाँ भी है, जो इस प्रकार है–**

1. विभिन्न कृषि क्रियाएँ जैसे– निंदाई–गुडाइ एवं पौध–संरक्षण संबधी क्रियाओं को क्रियान्वित करने में कठिनाई आती है।
2. रासायनिक खरपतवार नियंत्रण की विधि अपनाने में तकनीकि समस्या जैसे–गेहूँ+चना के मिश्रित फसल में चौड़े पत्ती वाले खरपतवारो के नियंत्रण के लिये 2.4–d खरपतवार–नाशक दवाई का प्रयोग नहीं किया जा सकता, क्योंकि इससे चने की फसल नष्ट हो जावेगीं जबकि गेहूँ की शुद्ध फसल में खरपवारों के नियत्रण के लिये यह एक अच्छा विकल्प है।
3. चूँकि मिश्रित फसलों के पकने का समय आगे–पीछे हो सकता है, अतः फसलों की कटाई में असुविधा होती है। इसके अतिरिक्त ऐसी फसलों की मशीनों से भी कटाई संभव नहीं होती है।
4. मिश्रित सस्यन से शुद्ध बीज प्राप्त नहीं होते है।
5. मिश्रित फसलो से प्राप्त उपज की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है।
6. यदि मिश्रित फसलों की खेती के सिद्धांतो के अनुरूप् फसलों का चयन नही किया गया, तो लाभ के बजाय हानि भी हो सकती है। इसके अतिरिक्त कुछ विशेष फसलों का दूसरे फसलों पर प्रतिकूल प्रभाव के कारण उत्पादन में कभी भी हो सकती है।

## सघन खेती–

**परिभाषा–** विभिन्न फसलों को एक, निश्चित समयावधि में एक ही भूमि मे उगाने की प्रक्रिया को सघन खेती कहते है। सघन खेती का मुख्य उद्देश्य, एक निश्चित समयावधि में प्रति क्षेत्र इकाई उत्पादन बढ़ाना है। सघन खेती को हम दूसरे शब्दों में, इस प्रकार से भी व्यक्त कर सकते है– जब भूमि सीमित हो एवं उसी भूमि पर एक निश्चित समय अवधि में फसलों को ऊगाने की संख्या बढ़ा दी जाय, तो इस प्रकार की खेती को सघन खेती कहते है।

बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराने के लिए, आज के समय में सघन खेती ही एकमात्र विकल्प हमारे पास

शेष है, क्योकि, बढ़ती जनसंख्या के दबाव के कारण खेती की भूमि अन्य कार्यो के लिए परिवर्तित हो रही है । अतः खेती का रकबा बढ़ाना अब संभव प्रतीत नहीं होता है। परन्तु सघन खेती करने के लिये कुछ ऐसी आवश्यक बाते है जिनका उपलब्ध होना आवश्यक है। इन आधार–भूत आवश्यकताओ के अभाव में सघन खेती सफल नहीं हो सकेगी, जो नीचे दिये जा रहे है–

## सघन खेती की मूल आवश्यकताएँ–

**1. अच्छी भूमि–** सघन खेती के लिये यह पहली आवश्यकता है, कि भूमि अच्छी होनी चाहिए। भूमि के सभी गुण ,जैसे – भैतिक रासायनिक एवं जैविक गुण, सघन खेती के अनुकूल होना चाहिये। भूमि समतल, मध्यम मृदा–विन्यास वाली दानेदार संरचना युक्त अच्छी जल–निथार एवं अलधारण क्षमता वाली होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त मृदा समु लगभग उदासीन एवं भूमि उर्वर होनी चाहिये। मृदा में लाभदायक सूक्ष्म जीवों की पर्याप्त संख्या का भी होना आवश्यक है। भूमि में उपरोक्त सभी गुणों का होना आवश्यक इसलिये है, क्योंकि कमजोर भूमि सघन खेती के दबाव को सहन नहीं कर सकेगी, जिससे अपेक्षित उत्पादन प्राप्त नहीं होगा।

**2. कृषि संसाधनो की उपलब्धता–** सघन खेती मे विभिन्न कृषि संसाधनो की नियमित आवष्यकता पड़ती रहती है। अतः श्रम अर्थात् मजदूर पूजी सिंचाई के साधन, बीज खाद एवं उर्वरक, कृषि यंत्र पौध–संरक्षण रसायन आदि की पर्याप्त मात्राओं में एवं समय पर उपलब्धता आवश्यक है।

**3. तकनीकि जानकारी–** सघन खेती मे इससे संबधित तकनीकि जानकारियों का ज्ञान होना आवश्यक है। इस बहु–फसली खेती में सस्यनियोजन फसल चक्र आदि की जानकारी आवश्यक है। सघन खेती में विभिन्न प्रकार की समस्याएँ जाती है जैसे–विभिन्न प्रकार की कीट–व्याधियाँ खरपतवार,भूमीय–प्रबंधन , पौध–पोषण इत्यादि। इन सभी समस्याओं को हल करने के लिये तकनीकी ज्ञान का होना आवश्यक है।

**4. विपणन सुविधाएँ–** सघन खेती से उत्पादित उत्पादो को बेचने के लिये बाजार एवं उसकी मांग एवं उत्पाद का अच्छा मूल्य मिलना आवश्यक है। उचित बाजार व्यवस्था के न मिलने की दशा में सघन खेती को प्रोत्साहन नहीं मिल सकेगा।

**5. उपयुक्त फसल किस्में–** सघन खेती में उपयुक्त फसलों की किस्मों का होना आवश्यक है। सघन खेती में उगाये जाने वाले विभिन्न फसलों की किस्में इस प्रकार होना चाहिए–

- अधिक उत्पादन देने वाली होनी चाहिये।
- शीघ्र पकने वाली हाने चाहिये।
- कीट–व्याधि रोधक क्षमता हो।
- प्रति इकाई अधिक खाद एवं उर्वरक उपयोग कर अधिक उपज दे सकने वाली हों।
- किस्में अनिश्चित प्रदीप्ति–काल वाली, अर्थात पूरे वर्ष भर उगाई जा सकने वाली हो।
- एक साथ पकने का गुण हो, जिससे फसल कटाई में आसानी एवं सुविधा होती है।

## सघन खेती में प्रचलित प्रमुख फसल–चक्र

**एक वर्षीय–**

**दो फसली**

| | |
|---|---|
| धान–गेहूँ | मक्का–आलू |
| धान–चना | सोयाबीन–गेहूँ |
| धान–मटर | अरहर–गेहूँ |
| मक्का–गेहूँ | धान–बरसीम |

**तीन फसली**

| | |
|---|---|
| धान–गेहूँ– मुंग | धान–गेहूँ–तिल |
| मक्का–आलू–आलू | धान–सूर्यमुखी–मुंग |
| मक्का–आलू–गेहूँ | सोयाबीन–गेहूँ–मुंग |

**चार फसली**

धान–आलू–गेहूँ–लोबिया
मक्का–आलू–गेहूँ–मुंग
टिन्डा–आलू–मूली–करेला

## सघन खेती के प्रकार–

सघन खेती मे एक वर्ष मे, एक ही खेत मे, दो से लेकर, चार फसलें तक ली जाती है। इन फसलों के लेने के लिये सघन खेती निम्नानुसार दो प्रकारो से की जाती है–

1. बहुफसली खेती
2. अन्तर्वर्ती खेती

**1. बहुफसली खेती–** वह फसल पद्धति, जिसमें एक वर्ष में एक ही भूमि में, दो या दो से अधिक फसलें क्रम से उगाते है, उसे बहुफसली खेती कहते है।

सघन खेती को निम्न फसल–पद्धतियों के माध्यम से सफल बनाया जा सकता है–

**(अ) अविराम खेती–** यह फसल उगाने की वह पद्धति है, जिसमें एक फसल, दूसरी फसल को, शीघ्र क्रम में जमीन हस्तांतरित कर देती है, अविराम खेती कहते है। उदाहरण–मक्का–अगेती आलू–गहूँ–मूँग।

**(ब) उतेरा खेती–** फसल उगाने की वह पद्धति जिसमें दूसरी फसल की बुवाई, पहली फसल के काटने के पूर्व ही कर दी जाती है , उसे उतेरा खेती कहते है।

**उतेरा खेती के निम्न उदाहरण है–**

वर्षा आश्रित या अर्द्धसिंचित अवस्थाओं में:

- धान–तिवडा
- धान–बरसीम
- धान–लूसर्न
- धान–अलसी

उपरोक्त उदाहरणो में, तिवडा बरसीम, लूसर्न या अलसी के बीज धान की फसल की कटाई के 15–20 दिन पहले छिड़क दिये जाते है। इस प्रकार यहाँ दोनो फसलों के बीच में कोई खाली समय नहीं रहा अर्थात, जमीन कभी भी पड़ती नहीं रही।

सुनिश्चित सिंचाई की अवस्थाओं में

1.मक्का–अगेती, आलू–पिछेली, आलू–कद्दवर्गीय फसलें

2.मक्का–आलू–प्याज–भिण्डी

यहाँ एक ही भूमि में, अक्टूबर माह में, आलू(किस्म–कुफरी चन्द्रमुखी) की बुवाई की जाती है। आलू में मिट्टी चढ़ाने के बाद कूडो में प्याज की बुवाई(रोपाई) कर दी जाती है। इसके बाद भिण्डी की बुवाई , आलू की खुदाई की जगह पर कर दी जाती है। बाद में भिण्डी की खडी फसल में मक्का की बुवाई कर दी जाती है। इस प्रकार, यहाँ पर दो फसलों के बीच मे समय का कोई भी अंतर नहीं होता है।

**अन्तर्वर्ती खेती–** मुख्य फसल की दो दूर–दूर कतारों के बीच में सहायक फसलों को उगाने की क्रिया को अन्तर्वर्ती फसल या अन्तःफसल कहते है। इस प्रकार की खेती का मुख्य उद्देश्य मुख्य फसल की दो कतारों के बीच में छूटे खाली स्थान का उपयोग एवं प्रति क्षेत्र इकाई अधिक उत्पादन प्राप्त करना होता है। उदाहरण–मक्का के साथ, मूँग, उड़द, सोयाबीन या मूँगफली की अन्तर्वर्ती खेती।

**अन्तर्वर्ती खेती को निम्नलिखित चार प्रकारों से किया जा सकता है–**

**(अ) समानान्तर खेती–** इस फसल पद्धति में, दो ऐसी फसलों का चयन किया जाता है, जिनकी बढ़ने की प्रवृत्ति असमान होती है, जिससे दोनो फसलों में प्रतिस्पर्धा शून्य होती है, अत– दोनो फसलें अपनी पूरी उत्पादन क्षमता प्रदर्शित करती है। उदाहरण– मक्का के साथ मूँग या उड़द एवं कपास के साथ उड़द या मूँग या सोयाबीन।

**(ब) सहचर खेती–** इस फसल पद्धति में एक फसल का उत्पादन दूसरे से प्रभावित नहीं होता है। दूसरे शब्दों में, दोनो फसलों का उत्पादन उनकी षुद्ध फसलों के बराबर होता है। इस प्रकार दोनो फसलों की प्रति इकाई क्षेत्र पौध संख्या उनके पुद्ध फसलों के बराबर ही रखी जाती है। उदाहरण–शरद कालीन गन्ने के साथ सरसों या आलू या गेहूँ की अन्तर्वर्ती खेती।

**(स) बहुमजिली खेती–** विभिन्न ऊँचाई वाले पौधो का एक खेत में एक ही साथ ऊगाने की क्रिया को बहुमंजिली खेती कहते है। सामान्यतः यह बागानों एवं रोपण फसलों मे किया जाता है जहां सूर्य की रोशनी का सही उपयोग होता है । इसके अलावा गन्ने के साथ सरसों एवं आलू भी एक बहुमंजिली खेती का उदाहरण है।

**(द) सहक्रियावादी खेती–** प्रति क्षेत्र इकाई के आधार पर दोनो फसलों का उत्पादन, एक साथ उगाने पर, उनके शुद्ध फसलों की अपेक्षा ज्यादा पाया जाता है उदाहरण–गन्ना+आलू।

# 3.जलवायु अनुकूल कृषि तकनीक

## जलवायु अनुकुल खेती की प्रमुख चुनौती है–

(1) अधिक खाद्यान

(2) अधिक कुशलता से

(3) अधिक अस्थिर उत्पादन स्थितियों के तहत

(4) खादय उत्पादन एवं विपणन से उत्सर्जित ग्रीन हाउस गैस में शुद्ध कटौती के साथ ।

## 3.1 जलवायु अनुकुल खेती के लिए नई तकनीकी, किस्मे और फसले

आमतौर पर उत्पादकता मे वृद्वि के अलावा नई तकनीके और नई किस्में जलवायु परिवर्तन को अनुकुलित करने मे किसानो को अधिक लचिलापन प्रदान करते है, जिसमें सुखे के प्रति सहनशीलता, जल संग्रहण तकनीक, कृषि संबधित लघु उद्योग आदि किसानों के जोखिम को कम करने मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

फसलो के विभिन्न किस्मे जो कीटो और बिमारियों में प्रतिरोधी है, जलवायु परिवर्तन के जोखिम को कम कर फसल उत्पादन मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है! इन किस्मो के प्रयोग से कीटनाशको की आवश्यकता को कम करके, कार्बन उत्सर्जन को कम करते है। चूकि कृषि द्वारा उत्सर्जित ग्रीन हाउस गैस के कुल मात्रा में अधिकतम योगदान फसलोत्पादन में उपयोग किये जा रहे नाइट्रोजन उर्वरक के अनुप्रयोग जिम्मेदार है। जिले के कृषक नाइट्रोजन स्त्रोत के लिए विभिन्न जैविक घटको का प्रयोग कर रहे है, जो कि ग्रीन हाउस गैस के उत्सर्जन की सम्भावना को काफी कम कर सकती है।

## 3.2 जल प्रबंधन और सिंचाई

जलवायु परिवर्तन वर्तमान मे सिंचाई वाले क्षेत्रो को बढावा .देगा और समान्य जल की कमी के कारण मौजूदा सिंचाई क्षमता को पीछे छोड़ सकता है। बस्तर के पठार में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 1392 मि.मी. है जो कि खण्डित होती है । इस वर्शित जल का उन्नत संग्रहण कर फसलो के क्रांतिक अवस्थाओ में सिंचाई हेतु उपयोग किया जा सकता है। बस्तर के पठार में नदी–नाले बहुतायत में उपलब्ध है जिस पर स्टाप डेम व चेक डेम का निर्माण कर, संग्रहित जल का उपयोग रबी फसलोत्पादन में किया जा सकता है।

## 3.3 फसलोत्पादन प्रबंधन

संरक्षित खेती उत्पादन की ऐसी तकनीकी है जो कि जलवायु परिवर्तन के प्रभावो को कम कर सकती है। इस तकनीक का मुख्य उददेश्य मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ का निर्माण करना तथा खेत में बिना जुताई या कम से कम जुताई तकनीक अपनाकर मृदा पारिस्थितिकी तंत्र को मजबूत करना है।

फसल कटाई उपरान्त नुकसान फसलोत्पादन मे होने वाले हानि का प्रमुख अंग है इसलिए फसल कटाई उपरान्त प्रभावी ढंग से प्रबंधन कर होने वाले हानि को कम किया जा सकता है। जैसे–जैसे मौसम गर्म हो जाते है व अधिक अनियमित होते है, फसल के बाद के नुकसान की संभावना बढ़ जाती है और इस प्रकार परिवहन और भण्डारण में सुधार भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है।

## 3.4 बीमा

माइक्रोफाइनेंस और सूक्ष्म बीमा उत्पादो मे ंनवाचार विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन के अनुकुल होने के लिए किसानो की क्षमता में सहायता कर सकते है। दन्तेवाड़ा जिले में खण्डित वर्षा होने के कारण सुखे की स्थिति पैदा जो जाती है, जिसे जिले के कृषक  अपने फसलो का बीमा कराकर होने वाले हानि को कम कर सकते है।

## अनुकूलन एवं न्यूनीकरण(मिटिगेशन) हेतु रणनीति

| क्षेत्र | अनुकूलन / रणनीति |
|---|---|
| जल | वर्षा जल संग्रहण को बढाना, जल भंण्डारण एवं संरक्षण तकनीक को अपनाना, जल को पुनः उपयोग करना, अलवणीकरण करना, जल उपयोग एवं सिंचाई क्षमता को बढाना। |
| कृषि | रोपण की तारीख और फसल विविधता का समायोजन, फसल स्थानांतरण, भूमि प्रबंधन बेहतर करना उदा. भूमि क्षरण को नियंत्रित करना एवं वृक्षारोपण कर मृदा को संरक्षित करना। |
| मानव स्वास्थ्य | हीट–हेल्थ एक्शन प्लान, आपातकालीन चिकित्सा सेवाएँ, जलवायु–संवेदनशील रोग निगरानी में सुधार एवं नियंत्रण करना, सुरक्षित पानी और बेहतर स्वच्छता को बढावा देना। |
| यातायात | स्थानांतरण के लिए सड़कों के लिए मानक डिजाइन एवं योजनाएँ बनाना,रेल एवं अन्य बुनियादी ढॉचों को गमी से बचाने एवं निकासी के लिए उचित प्रबंध रखना। |
| उर्जा | ओवरहेड ट्रांसमिशन और वितरण को सुदृढ़ बनाना, उपयोगिता के लिए भूमिगत केबलिंग का उपयोग, उर्जा के नवीकरण स्रोतों के उपयोग को बढावा। |

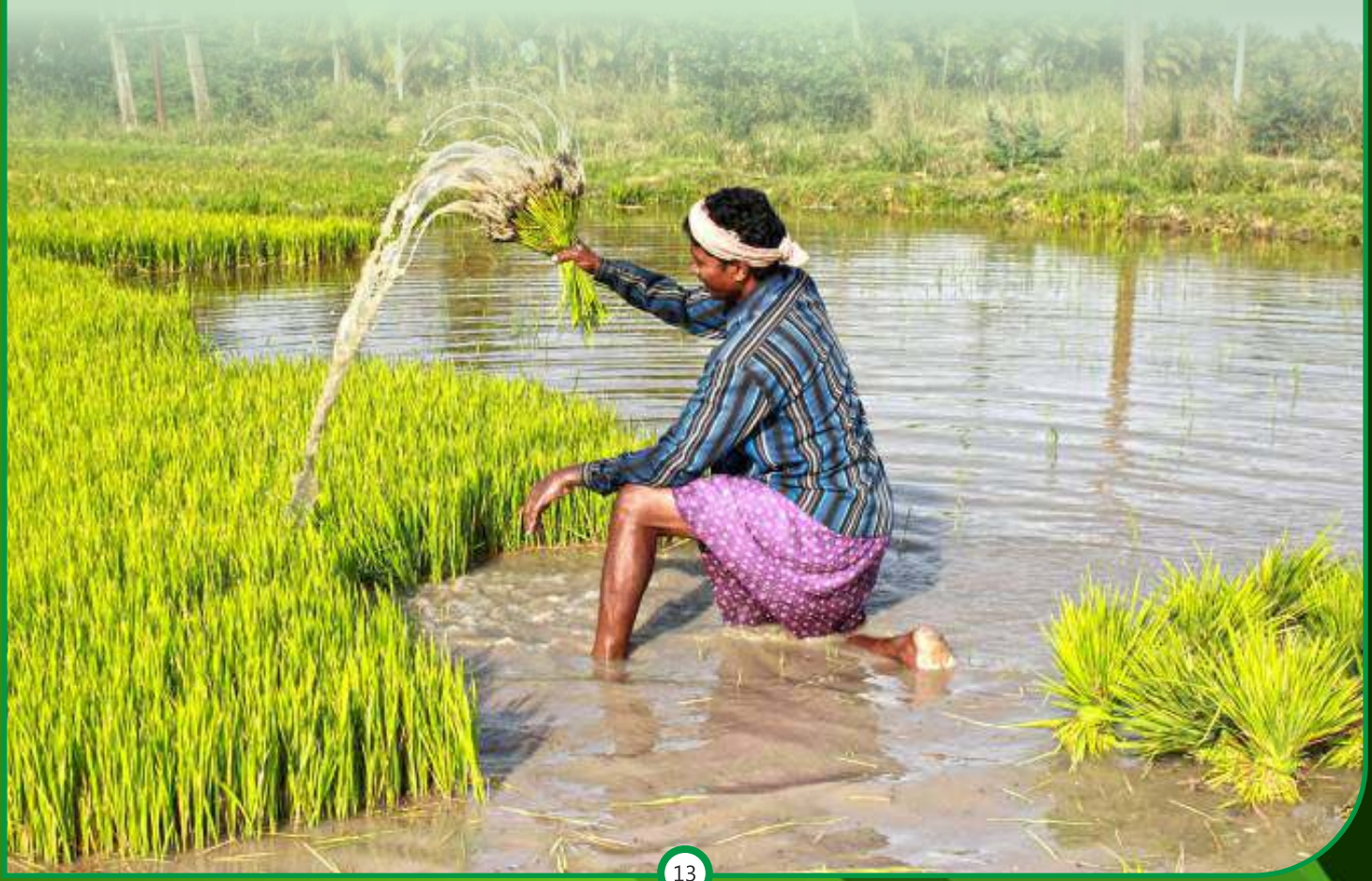

# 4. समन्वित कृषि प्रणाली जलवायु अनुकूलन के सन्दर्भ में-

छत्तीसगढ़ में लघु एवं सीमांत कृषक कुल जनसंख्या का एक चौथाई एवं कुल भुमि का एक तिहाई भाग रखते है। यहा की खेती मुख्यतः कृषि आधारित खेती है, जिसके कारण वर्ष दर वर्ष उतार चढाव के साथ कम उत्पादकता उत्पन्न होती है। बढती हुई आबादी के कारण प्रति व्यक्ति भूमि की दर कम होती जा रही है जिसके कारण कम आय और बेरोजगारी यहां के किसानो की प्रमुख समस्या है। यहा के लगभग सभी किसान धान के केवल एक फसल पद्वति का निर्वाहन करते है, जिसके कारण लाभ मे अनिश्चितता बनी रहती है एवं विभिन्न सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं का सामना करना पडता है। इस समस्या का केवल एक ही हल है कि किसान फसलोत्पादन के साथ–साथ सब्जी और फल उत्पादन, पशु–पालन, मत्स्य पालन, वानिकी, मधुमक्खी पालन, कुक्कुट पालन, मशरूम उत्पादन, वर्मी कम्पोस्टींग इत्यादि को फसल पद्वति में शामिल करें जिसे समन्वित कृषि प्रणाली कहा जाता है । यह प्रणाली न केवल किसानों की आमदनी मे वृद्वि करेगा अपितु वर्षभर रोजगार प्रदान कर उनके सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को सुदृढ बनाएगा। इसके अलावा यह पद्वति वर्मी कम्पोस्ट नाडेप कम्पोस्ट इत्यादि के माध्यम से मृदा मे कार्बनिक पदार्थ की मात्रा से वृद्वि करने में सहायक होगी। जल संग्रहण तकनीक एवं संग्रहित जल का समुचित उपयोग विधि, वर्षा आधारित क्षेत्र के फसल सघनता एंव उत्पादन वृद्वि में प्रमुख भूमिका अदा करेगी।

## 4.1 समन्वित कृषि प्रणाली के उद्देश्य

समन्वित कृषि प्रणाली के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैः–

1. वर्षभर रोजगार मे निरंतरता के साथ–साथ उत्पादन एवं आय में वृद्वि करना
2. प्रक्षेत्र में उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग करना
3. लघु–सीमांत कृषकों के लिए जीवकोपार्जन के साधन के रूप में स्थापित करना

## छत्तीसगढ़ के मैदान के लघु सीमांत कृषकों लिए उपयुक्त समन्वित कृषि प्रणाली

1. समन्वित कृषि प्रणाली वर्षा आधारित भूमि के लिए (2–4 एकड़): रागी – चना – कददुवर्गीय सब्जियां + ग्रैविटी ड्रिप पद्वति में सब्जियां + चारा (चरी–मक्का) + कुआ निर्माण + प्रक्षेत्र तालाब +मत्स्य पालन + बत्तख (20) + गाय (2) + बकरियां (20) + कुक्कुट (50) + नाडेप टैंक + वर्मीकम्पोस्ट टैंक + दलहन – फूल – इमारती लकडी पौधा मेढ़ पर

2. समन्वित कृषि प्रणाली सिंचिंत क्षेत्र के लिए (1–2 एकड़): उच्च तकनीक सब्जी उत्पादन (ड्रिप) + चारा + नर्सरी / फूल + स्वीट कार्न – हरा मटर (सब्जी) / मक्का + गाय (2) + बकरी (20) + कुक्कुट (50) + तालाब + मत्स्य पालन + बत्तख (20) + नाडेप टैंक + वर्मीकम्पोस्ट टैंक + बायोगैस + मशरूम +फल एवं सब्जियां मेढ़ पर ।

## 4.2 समन्वित कृषि प्रणाली के फायदे :–

1. जीवकोपार्जन हेतु खाद्यान उत्पादन, लाभ एव रोजगार के अवसर प्राप्त होता है।
2. कृषि आधारित उद्यम के रूप में कार्य करता है।
3. समन्वित कृषि प्रणाली के समस्त घटक एक – दूसरे के पूरक होते है जिससे कि कृषि लागत में कमी होती है।
4. समन्वित कृषि प्रणाली जैविक खेती को बढावा देती है तथा मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन में प्रमुख भूमिका अदा करती है।
5. इस पद्वति में बायोगैस एवं कृषि वानिकी का समावेष है जो कि घरेलु ऊर्जा के स्त्रोत रूप के कार्य करती है।
6. इस पद्वति में फसलोत्पादन के साथ – साथ सब्जियां, मुर्गीपालन, मत्स्य इत्यादि भामिल है जो कि आदिवासी कृषकों के लिए आवश्यक दैनिक पोंशक तत्व को उपलब्ध कराकर कुपोशण की समस्या को दूर करने में सहायक हो रही है।
7. खाद्यान, पोषण एवं आजीविका सुरक्षा में उपयोगी।

# आजीविका बढाने के लिए समन्वित कृषि की सफलता की कहानी

कृषि विज्ञान केन्द्र, कवर्धा में समन्वित कृषि प्रणाली के अंतर्गत स्थापित विभिन्न इकाई निम्नानुसार है।

**1. पशुधन उत्पादन इकाई**– जिसमें 4 गाय साहीवाल प्रजाति की है। जो औसत 1 गाय प्रतिदिन 4 लीटर दूध देती है।

**2. मशरूम उत्पादन इकाई**– मशरूम उत्पादन इकाई में आयस्टर मशरूम का उत्पादन किया जा रहा है। जिसमें प्रतिमाह लगभग 5 किलोग्राम उत्पादन होता है।

**3. कुक्कुट पालन इकाई**– कुक्कुट पालन किया जा रहा है। जिसमें कड़कनाथ प्रजाति को रखा गया है।

**4. मछली सह बत्तख पालन इकाई**– मछली पालन सह बत्तख पालन जिसमें 0.14 हे0 तालाब में मिश्रित मछली पालन किया जा रहा है। कतला,रोहू,मृगला का संचय किया गया है। जिसमें लगभग 2 क्विंटल प्रतिवर्ष मछली का उत्पादन किया जा रहा है। साथ व्हाइट पेकिंग बत्तख की प्रजाति का संचय किया गया है, एवं तालाब की मेड़ पर फलदार वृक्ष,नारियल का रोपण किया गया है।

**5. केंचुआ खाद इकाई**– केंचुआ टैंक जिसमें केंचुआ खाद का उत्पादन किया जा रहा है। जिसमें लगभग 15 क्विंटल प्रतिवर्ष उत्पादन किया जा रहा है।

**6. नाडेप**– खाद का उत्पादन किया जा रहा है। जिसमें 5 क्विंटल प्रतिवर्ष उत्पादन हो रहा है।

**7. अजोला**– अजोला उत्पादन इकाई स्थापित की गई है। जिसमें लगभग 6 किलोग्राम प्रतिमाह उत्पादन किया जा रहा है।

**8. मातृ बगीचा**– मातृ बगीचा स्थापित किया गया है। जिसमें आम,अमरूद, नीबू एवं सीताफल की उन्नत प्रजाति का रोपण किया गया है।

**9. पाली हाऊस**– पालनी हाऊस में अनेक पौधे को तैयार किया जा रहा है।

साथ ही कबीरधाम जिले में लगने वाले विभिन्न फसलों जैसे धान, सोयाबीन, चना, मूंगफली, उड़द, अलसी, सरसों, मटर, गेहूं, तिवड़ा, गन्ना एवं की उन्नत किस्मों का क्रॉप कैफेटेरिया लगाया जाता है। जिसे कृषक अवलोकन कर अपने खेती में उपयोग कर सकें।

# 5. जल ग्रहण प्रबंधन की आवश्यकता एवं महत्व जलवायु अनुकूलन के सन्दर्भ में

## 5.1 जल ग्रहण प्रबंधन एवं भू–जल संवर्धन

बिना जल के कृषि द्वारा भरण–पोषण, आर्थिक विकास एवं देश की समृद्धि में बढ़ोत्तरी नहीं की जा सकती । छतीसगढ़ में औसतन वार्षिक वर्षा 1200 मि.मि. से 1600 मि.मि. होती है । इस वर्षा के जल को संग्रहण कर फसलों की सिंचाई में उपयोग कर सकते है । पूर्व में केवल नहर सिंचाई के द्वारा ही खेती की जा रही थी, चूँकिछतीसगढ़ में ढालूदार जमीन बहुत अधिक है, ऐसी स्थिति में नहर सिंचाई कारगर नहीं हो सकती । वर्षा को रोककर सतही जल, मृदा जल एवं भू–जल को बढ़ते हुये उसका संतुलित उपयोग उन्नत सिंचाई विधियाँ (ड्रिपएवंस्प्रिंकलर) अपनाकर किया जाना चाहिए । ढालदार जमीन होने के कारण यहाँ बहुत छोटे–छोटे जलग्रहण क्षेत्र (वाटरशेड) मिलते हैं और उन जलग्रहण क्षेत्रों का पानी नालों से बहते हुये नदी में और नदी से समुद्र में चला जाता है । यदि किसान भाई इस जल को बहने से रोके तो उनकी आर्थिक दशा सुधरेगी। छतीसगढ़ राज्य में कृषि की प्रमुख समस्या है असमय वर्षा से फसलों को आवश्यक जल की मात्रा समय पर उपलब्ध न हो पाना । अतःवर्षा पर निर्भर खेती के विकास के लिए जल का समुचित प्रबंध किया जाना नितांत आवश्यक है। जल की समुचित मात्रा फसलों की जल आवश्यकता के समय उपलब्ध करायी जा सकें इसके लिए वर्षा जल को अधिक से अधिक रोककर संग्रहीत करना होगा । हर स्तर पर छोटे–छोटे नालों, तलबों,झरनों में जल को इकट्ठा करना होगा ताकि उस जल का समय पर फसलों की सिंचाई के लिए उपयोग किया जा सके। ऐसा करने से भू–जल का स्तर भी कुओं व नलकूपों में बढ़ाया जा सकता है ।

वर्षा का वितरण समान न होने के कारण राज्य में जहां एक ओर अधिक वर्षा से आवश्यकता से अधिक वहीं दूसरी ओर कम वर्षा से अवश्यकता से कम जल पौधों को उपलब्ध हो पाता है । इन दोनों ही स्थितियों में फसल की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और उत्पादन में भरी कमी आती है । खेती के विकास के लिए वर्षा जल का समुचित प्रबंधन किया जाना चाहिए जिससे जल की आवश्यक मात्रा फसलों को उपलब्ध कराई जा सके । वर्षा जल के समुचित प्रबंध के लिए जल ग्रहण क्षेत्र (वाटरशेड) को आधार बनाना उचित है, क्योकि जल ग्रहण क्षेत्र मृदा एवं जल अभियांत्रिकी की दृष्टि से एक स्वतंत्र इकाई है। कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी तभी संभव है जब समुचित कृषि तकनीक जल ग्रहण क्षेत्र के अनुरूप अपनाएं ।

जल ग्रहण क्षेत्र किसी जल धारा के ज्ञात बिन्दु के ऊपर भूमि का वह समस्त क्षेत्रफल है जिससे अतिरिक्त वर्षा जल बहकर उस बिन्दु में समाहित होता हैं । यह एक ऐसी जलीय इकाई है, जिसका प्रबंध सुगमतापूर्वक किया जा सकता है । इसमें कृषि का विकास कृषि योग्य भूमि तक ही सीमित नहीं रहती बल्कि क्षेत्र के सर्वोच्च बिन्दु से जल निकास बिन्दु (नाला अथवा नदी) तक सम्पूर्ण विकास कार्य किया जाना सम्मिलित है ।

वर्षा पर निर्भर खेती के लिए वर्षा जल का समुचित प्रबंध सबसे महत्वपूर्ण है । इसमें सबसे अहम तथ्य है कि अनावश्यक जल खेतों से मिट्टी को बिना नुकसान पहुचायँ निकल जावे । जल खेतों में नहीं भरे और जल का बहाव भू–क्षरण भी नहीं करे । वर्षा जल जहां से बहना प्रारम्भ होता है वहीं से जल ग्रहण क्षेत्र की सीमा प्रारम्भ हो जाती है । अतः जल ग्रहण क्षेत्र में वर्षा जल के प्रबंध का कार्य प्रारम्भ से ही किया जाना आवश्यक हो जाता है । तात्पर्य यह कि जिस प्रकार की समस्या अतिरिक्त जलवाह द्वारा उत्पन्न हो रही है, उसी प्रकार का निदान प्रारम्भ से ही अपनाया जाना आवश्यक है । फालतू निष्कासित जल को जल ग्रहण क्षेत्र के निचले क्षेत्रों में एकत्र करना अत्यंत आवश्यक है क्योकि इसका उपयोग अवर्षा की स्थितियों में फसलों की जीवनरक्षक सिंचाई में किया जा सकता है ।

किसी भी जल ग्रहण क्षेत्र में उपस्थित जल स्त्रोतों में जल की मात्रा का मूल्यांकन किया जाता है, साथ ही, उपलब्ध जल की मात्रा की समुचित उपयोग की प्रभावशाली योजना तैयार की जाती है । बनाई गई योंजनाओं को जल ग्रहण क्षेत्रों में लागू किया जाता है । आवश्यक जल प्रवाह को उचित स्थानों में रोककर एकत्र किया जा सकता है, जिससे जल की उपलब्धता बनाईजा सकती है ।

जल ग्रहण क्षेत्र के समुचित प्रबंध में सबसे अहम मुद्दा मिट्टी के कटाव को बचाने के अलावा वर्षा जल को सतही संरचनाओं द्वारा रोकना तथा भू–जल में बढ़ोत्तरी करना है । वर्षा पर निर्भर खेती के लिए जल ग्रहण क्षेत्र योजना के अंतर्गत मुख्य रूप से दो बातों का समावेश आवश्यक है । प्रथम मृदा एवं जल प्रबंध की क्रियायँ एवं दूसरा फसल उत्पादन की क्रियाये।

## 5.2. सतही जल तथा भू–जल संवर्धन के मुख्य बिन्दु जिन्हे किसान भाइयों को अपनाना चाहिए, निम्नानुसार है

1. भूमि का ढाल यदि 6 प्रतिशत से अधिक हो और मिट्टी की गहराई पर्याप्त हो तो सीढ़ीदार खेत बनाना चाहिए ।
2. छोटी–छोटी मेड़ों का निर्माण कर जल प्रवाह की दिशा बदलना चाहिए जिससे यह जोते हुए खेतों में भू–क्षरण न करे ।
3. घास युक्त निकास नाले बनाना चाहिए।
4. जहां आवश्यक हो वहां वेस्ट वियर का निर्माण करना चाहिए।
5. स्टाप डेम या चेक डेम का जहां आवश्यक हो निर्माण करना चाहिए।
6. मृदा में जल के संरक्षण के लिए खेतों की जुताई हमेशा समोच्च रेखा पर ही ढाल की विपरीत दिशा में करना चाहिए।
7. समोच्च बंधियों का निर्माण करना चाहिए ।
8. डबरी का निर्माण करना चाहिए जिसका उपयोग जल एकत्रीकरण के ल्ये किया जा सके और एकत्रित जल का उपयोग जीवन रक्षक सिंचाई में हो सके ।
9. जलवाह के संचय तथा इसके समुचित उपयोग से संबन्धित समस्त कार्य करना चाहिए ।
10. चेक डेम या जल निपट विन्यास का निर्माण करना आवश्यक है । यदि ईट, सीमेंट उपलब्ध नहीं है तो स्थानीय उपलब्ध सामग्री द्वारा जैसे दृ कंकड़, पत्थर, लकड़ी इत्यादि से ही किया जा सकता है ।
11. अनावश्यक जल प्रवाह को समोच्च नालियाँ बनाकर सुरक्षित तरीके से बाहर निकालना चाहिए ।
12. टेढ़े–मेढ़े नालों को सीधा करके भूमि का संरक्षण करना आवश्यक है ।
13. जल निकास की नालियों एवं निकास नालों को स्थिर करने का कार्य करना चाहिए ।
14. गहरी जुताई (25–30 से.मी.) कम से कम 2 वर्ष में एक बार करनी चाहिए ।
15. नदी नालों में अंडरग्राउंड डाईक का निर्माण करने से भू– जल बढ़ाया जा सकता है ।
16. परकोलेशन तालाबो का निर्माण कर सतही जल को अधिक से अधिक जमीन के नीचे जाने हेतु इन तालाबो में एकत्रित करना चाहिए । शोध के परिणामों से पता लगता है कि परकोलेशन तलबों से भू–जल को काफी मात्रा में बढ़ाया जा सकता है ।
17. रिंगवेल या खुलें कुआं के अंदर नलकूपों का खनन करना चाहिए जिससे वर्षा के समय पंप को निकालकर ट्यूब द्वारा भू–जल के पुनःभरण की क्रिया की सकती है इससे सम्पूर्ण क्षेत्र में जल स्तर बढ़ाया जा सकता है । बाद में रबी में सिंचाई के लिए ट्यूब वेल का उपयोग पंप लगाकर करना चाहिए। इस विधि से जल के पुनःभरण का कार्य समस्त किसानों को करना होगा तभी सम्पूर्ण क्षेत्र में जल स्तर बढ़ाया जा सकेगा।

## 5.3. जलग्रहण क्षेत्रो में फसल उत्पादन हेतु कृषकों द्वारा अपनाई जाने वाली क्रियाएं

1. जलग्रहण क्षेत्रो में जल की उपलब्ध के आधार पर उपयुक्त फसल पद्धति का उपयोग करे।
2. कम पानी की स्थिति में अधिक उपज देने वाली कम व मध्यम अवधि के किस्मों का चयन करे।
3. कम पानी चाहने वाली फसलों को लगाये।
4. स्थिर आय हेतु फसल उत्पादन के साथ साथ अन्य व्यवसाय मुर्गी पालन, मछली पालन, बकरी पालन, डेयरी, मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन एवं सुवर पालन आदि अपनाये।
5. ढाल के अनुरूप खली भूमि में उपयुक्त फलदार एवं अन्य पेड़ पौधे लगाये।
6. सूक्ष्मसिंचाईपद्धतिअपनाये।
7. नमी के समुचित उपयोग हेतु है पीसीडर यंत्रो का बोआई में उपयोग करे।
8. स्थानीय उत्पादों का मूल्य संवर्धन कर अधिक लाभ ले।
9. फसल अवशेषों एवं कार्बनिक खादों को मिट्टी में मिलाकर भूमि की जलधारण क्षमता में वृद्धि करे।

# केस स्टडी

कबीरधाम जिले के बोड़ला विकासखण्ड में डी.पी.ए.पी. 11 वॉ बैच योजना मद के अंतर्गत जमुनिया नाला मिलीवाटर शेड का चयन जलग्रहण क्षेत्र प्रबंधन के अन्तर्गत किया गया है। जमुनिया नाला क्षेत्र अंतर्गत छह माइक्रोवाटर शेड में तेईस ग्रामों का सम्मिलित किया गया है एवं इसका कुल क्षेत्रफल 2500.000 हेक्टेयर है। जमुनिया पूर्व से पश्चिम की दिशा रहता है। इस योजना क्षेत्र का सामान्य ढाल पूर्व से पश्चिम की ओर है।

माइक्रोवाटर शेड जलग्रहण क्षेत्र में औसत वर्षा 950 मि.ली. है। वर्षा 25 जून से ही प्रारंभ होकर 30 सितम्बर तक समाप्त हो जाती है। ग्रीष्मकाल में तापमान 450 से.ग्रे. तक रहता है। जबकि शीत ऋतु में तापक्रम 8–120 से.ग्रे. तक नीचे जाता है। परियोजना क्षत्र की जलवायु अर्धशुष्क (सभी एरिया) है। वर्षा की अनिश्चितता के कारण प्रायः सूखे एवं अकाल के विभिष्का रहती है।

माइक्रोवाटर शेड के सम्पूर्ण भाग के भर्री में (अनबंडेड) है। खेतो में प्रायः खरीफ में कोदों, कुटकी,अरहर की खेती करते है। भर्री खेतों में भूमि क्षरण अधिक होने एवं नमी कम होने के कारण किसान कोदो, कुटकी,अरहर की फसल काटने के बाद अगली खरीफ परती रखते है।

जमुनिया माइक्रोवाटर शेड परियोजना क्षेत्र में कुंओं का जल स्तर 50–60 फीट की गहराई पर मिलता है। ग्रीष्मकाल में कंओं का जल स्तर काफी कम हो जाता है। कुछ जगह कंआ सुख जाता हैं। पेयजल हेतु नदी–नालों में झिरिया बनाकर पानी की आपूर्ति की जाती है एवं कहीं–कहीं हेंडपंप के द्वारा पानी की आपूर्ति की जाती है। हैण्डपंप की औसतन गहराई ऊपरी भाग 200–250 फीट गहराई तक खोदे गये है, ऊपरी भाग में ग्रीष्मकाल के समय नाला सूख जाते हैं।

परियोजना के सभी ग्रामों में वनक्षेत्र एवं वनस्पतियों का अभाव है। पषुओं की संख्या क्षेत्र में उपलब्ध चारागाह क्षेत्र के मान से बहुत अधिक है, पशुओं की चारागाह में खुले चराने की प्रथा होने से चारे का उत्पादन अत्यंत कम होता है उल्टे ऐसे क्षेत्र में भूमि क्षरण के लिए खुल जाते है। पशुओं का हरे चारे की उपलब्धता न होने के कारण स्थानीय एवं खराब नस्ल होने के कारण पशु आहार बाहर से खरीदने के लिए व्यय करनी पड़ती है। पशुओं से प्राप्त गोबर का उपयोग बेड बनाकर ईधन हेतु करते है।

परियोजना क्षेत्र में खुदाई करने पर 3 फीट गहराई पर कुछ भागों में पत्थरों का चटट्ान पाये जाते है। परियोजना क्षेत्र में घनत्व अधिक है। कृत्रिम भू–जल रिचार्ज हेतु इंजेक्शन कूप एवं भूमिगत वनधारा का निर्माण कर भू–जल स्तर में वृद्वि की जा सकती है।

परियोजना क्षेत्र के ग्रामों में आदिवासी श्रेणी के आबादी निवास करती है तथा माइक्रोवाटर शेड के अधिकतर ग्रामों में स्त्री–पुरुष निरक्षर है। यहॉ स्त्रियॉ घर के साथ कृषि कार्य भी करती है।

**माइक्रोवाटरशेड की समस्याऐं एवं उनका तकनीकी विश्लेषण–**

माइक्रोवाटरशेड के ग्रामों में भ्रमण से चर्चा उपरान्त उनके द्वारा सुझाई गई प्रमुख समस्याएं एवं उनका विश्लेषण निम्नानुसार है–

1. माइक्रोवाटर शेड क्षेत्र के लगभग 90 प्रतिशत भू–भाग भर्री हैं। जहॉ से भूक्षरण अधिक होने से दूसरी फसल हेतु नमी का अभाव हो जाता है एवं फसल उत्पादन प्रतिवर्ष गिरता जात है। इस क्षेत्र की कंटूर बंडिग कार्य कराने से भूमि क्षरण की समस्या का समाधान होगा एवं फसल उत्पादन में स्थिरता आवेगी।

2. क्षेत्र में वर्षाकाल के पष्चात् ग्रीश्म में पेयजल एवं निस्तार की समस्या हो जाती है। इस समस्याा के निदान हेतु वर्षा के पानी को अधिक से अधिक खेतखार में वर्षा के जल को रोकने के लिए बंधान नालों में जगह–जगह पर पत्थर मिटट्ी के बांध खेतों में छोटे– छोटे फार्म पौण्ड ग्रामों में निर्मित कडाही नुमा तालाबों का गहरीकरण एवं नालों में पक्का बंधान बनाये जाने से खेतखार में भू–जल स्तर बढ़ेगा, मिटट्ी की उपजाऊ उपरी परत का संरक्षण होकर फसल में वृद्वि करेगी।

3. क्षेत्र सूखा पीडित होने से कृषकों को खेती में वर्ष भर कार्य उपलब्ध नही हो पाता, जिससे पलायन की स्थिति निर्मित होती है। क्षेत्र में रोजगार मूलक कार्यो एवं भूमि व जल उपलब्धता में वृद्वि होने से रोजगार के अवसर बढ़ेगा।

4. क्षेत्र में चार वनस्पति एवं पर्यावरण असंतुलन एवं ईधन व ईमारती लकडी का समस्या है। इस समस्या के समाधान हेतु जल ग्रहण क्षेत्र में अधिक से अधिक वानिकी एवं फलदार पौधों का रोपण करना प्रस्तावित है जिससे पर्यावरण में सुधार एवं ईधन लकडी की उपलब्धता बढ़ेगी।

5. चारा उत्पादन एवं पशु धन विकास क्षेत्र में चारे का उपलब्धता बहुत कमी है। इससे पशुओं की उत्पादकता क्षीण है, इस हेतु योजना में चारागाह विकास एवं चारागाहें का उत्पादन कर विकास किया जाना प्रस्तावित है। इससे हरे चारे की उपलब्धता बढेगी पशु पालन कार्यक्रम के अंतर्गत उन्नत नस्ल के पशु पालन एवं बांधकर खिलाने की प्रथा को प्रोत्साहित किया जायेगा।

6. जलग्रहण क्षेत्र में सभी लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने एवं लाभ का समान वितरण करने हेतु महिला बचत समूह स्वावलम्बी दल एवं उपभोक्ता समूहों का गठन किया जायेगा।

## 6. महात्मा गॉधी नरेगा के माध्यम से जलवायु संवेदनशील विकास हेतु अधोसंरचना निर्माण

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 यमनरेगा एक रोजगार गारंटी योजना है, जिसे 25 अगस्त 2005 को विधान द्वारा अधिनियमित किया गया। यह योजना प्रत्येक वित्तीय वर्ष में किसी भी ग्रामीण परिवार के वयस्क सदस्यों को 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराती है जो प्रतिदिन न्यूनतम मजदूरी पर अकुशल मजदूरी करने के लिए इक्छुक है। मनरेगा अधिनियम का दूसरा लक्ष्य यह है कि इसके तहत टिकाऊ परिसम्पत्तियों का सृजन हो और ग्रामीण आजीविका का आधार मजबूत बनें। इस अधिनियम का मकसद जल, जमीन, एवं जंगलों के संरक्षण कर निर्धनता की समस्या से भी निपटना है ताकि रोजगार एवं आजीविका के अवसरों से ग्रामीणों को लाभ हो।

इन्फ्रास्ट्रचर फॉर क्लाइमेट रेसिलिएंट ग्रोथ (आई.सी.आर.जी.) कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब तथा अति संवेदनशील लोगों को मनरेगा अंतर्गत प्राकृतिक संसाधन अधोसंरचना निर्माण के द्वारा जलवायु परिवर्तन के कारण बन रही विपरित परिस्थितियों जैसे सूखा व बाढ़ के प्रभाव को सहने में सक्षम बनाना है। आई.सी.आर.जी. कार्यक्रम, मनरेगा के प्रशासनिक एवं तकनीकी क्षमता वर्धन कर मनरेगा के कार्योध्सरंचनाओं को जलवायु अनुकूल क्रियान्वयन करने में महत्वपुर्ण भूमिका निभा रहा है।

गर्मी में अधिकतम तापमान में बढ़ोतरी, ठंड में तापमान में कमी, बरसात में अधिकध्कमध्असमय वर्षा होना जलवायु परिवर्तन के सामान्य लक्षण है। जलवायु परिवर्तन से पड़ने वाले प्रभाव असल में कितना प्रभावित करेगा, इस बारे में निश्चित तौर पर कहना मुश्किल है, लेकिन सामान्यतः जलवायु परिवर्तन के निम्नलिखित पहलु महसूस किये जा रहे है–

- सामान्य स्थिति से स्थानीय मौसम में अधिक बदलावए
- तय सीमा में वर्षा का वितरण सही ना होना।
- लगातार फसल पैदावार में कमी।
- जल स्त्रोत का घटना।
- बाढ़, तूफान, सूखा और गर्म हवाएं चलने की घटनाएं बढ़ सकती है।
- 65% कृषि आधारित लोगों के आजीविका पर प्रभाव,
- बिमारियों का प्रकोप बढ़ना।

मनरेगा से कुल 155 स्वीकृत कार्यों में 100 कार्य, मिट्टी एवं जल संरक्षण से सम्बंधित है। जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में मनरेगा एक कारगर अधिनियम है, जो न केवल ग्रामीण परिवारों को रोजगार की गारंटी देता है अपितु जल, जमीन, जंगल, को संरक्षित कर उनका आधार मजबूत करता है और जलवायु परिवर्तन के प्रकोप से बचने में कारगर हो सकता है।

**जलवायु अनुकूलता तथा मनरेगा की भूमिका–**

सामान्यतौर पर यह देखा गया है कि जलवायु परिवर्तन के प्राकृतिक संसाधन पर पड़ने वाले प्रभावय पर्यावरण, परिसंपत्ति एवं समुदाय पर ज्यादा होते हैं और आने वाले समय में और अधिक प्रभाव पड़ने की संभावना है। अतःप्राकृतिक संसाधन के प्रबंधन को एकीकृत रूप से देखना एवं विकास के विभिन्न योजनाओं के साथ मनरेगा कार्यों को जलवायु अनुरूप बनाने के लिए पर्यावरण, परिसंपत्ति एवं समुदाय क्षेत्रों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को जानना आवश्यक है।

1. **पर्यावरण पर प्रभाव–** इस बात के प्रमाण हैं कि प्राकृतिक संसाधन जैसे जल, मृदा व वन संरक्षण के कार्यो से पर्यावरण पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। मनरेगा इस पर जोर देता है कि अनुकूल प्रभावों को कैसे बढ़ाया जाए जिससे लोगों की आजीविका मजबूत हो और लोगो की रुचि इस प्रकार के कार्यों में बढ़े। इसके लिए गॉव में संरचना का निर्माण, वहां के जलवायु प्रभाव को ध्यान में रखते हुए एवं कार्यस्थल का चयन लोगों की जलवायु अनुकूल रणनिति को ध्यान में रखते हुए किया जाना आवश्यक है।

2. परिसंपत्तियों पर प्रभावरू यह सच्चाई है कि महात्मा गांधी नरेगा के अंतर्गत ज्यादातर निर्मित परिसंपत्तियाँ गुणवत्ता के अभाव में टिकाऊ तथा उपयोगी नहीं हो पाती हैं। इस दिशा में यह जरूरत है कि मनरेगा में परिसंपत्तियों का नियोजन सही हो। कार्य कहां किया जाना है व कैसे किया जाए यह स्थानीय लोगों के साथ मिलकर तकनीकि रूप से किया जाए जिससे कि परिसंपत्तियां लंबे समय तक उपयोगी व जलवायु अनुकूल बनी रहे।
3. सामुदायिक प्रभावरू गिरता हुआ कृषि उत्पादकता स्तर, जल संकट और बढ़ती हुई गरीबी इस बात का प्रमाण है कि महात्मा गांधी नरेगा में बन रही परिसंपत्तियों के निर्माण से समुदाय को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। मनरेगा कार्यक्रम के तहत सामुदायिक स्तर पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव व इसके अनुकूल गतिविधियों के बारे में जागरूकता व समझ विकसित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। मनरेगा के अन्तर्गत इससे जुड़ी परिसंपत्तियों की योजना बनाए व जलवायु अनुकूल गतिविधियों को अपनाने पर कार्य करने की आवश्कता है।

उपरोक्त तीनों प्रभाव से बचने के लिए जलवायु अनुरूप कार्यों को करना, महिला एवं वंचित वर्गों के साथ सहभागिता तथा क्षमता निर्माण करना मनरेगा के आई.सी.आर.जी कार्यक्रम का मूल ध्येय है।

## छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्र हेतु जलवायु अनुकूल प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन के प्रमुख संरचनायें

### वृक्षारोपण–

वृक्षारोपण एक महत्वपूर्ण जलवायु अनुकूल कार्य है। यह प्रायः सभी तरह से जमीन पर किया जा सकता है। वृक्षारोपण एक तरफ तो हमें फल, जलावन लकड़ी, चारा, एवं लकड़ी प्रदान करती है तो दूसरी तरफ वातावरण के कार्बन डाइक्साइड को संग्रह कर, मिट्टी क्षरण को सीमीत कर, भूजल संग्रह कर बहुतायत सामुदायिक लाभ देती है। वृक्षारोपण से संबंधित महत्वपूर्ण बातें–

- भूमि का ढाल 25 प्रतिशत या उससे उपर है तो उसमें घास व वृक्षारोपण ही किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त सड़क के किनारे, खेत के मेड़ों पर , नालों के तट पर, सामुदायिक स्थानों पर वृक्षारोपण से पर्यावरण संरक्षण में मदद मिलती है।
- फलदार पेड़, एग्रो फारेस्ट्री एवं पल्पवुड के समर्थन को बढ़ावा देना चाहिए।
- अनुपयोगी बंजर पहाड़ी मुरूम वाली मिट्टी होने पर नीम, शीशम, करंज सागौन, बांस, मुनगा, सीताफल, बेर, ऑवला, अमरूद, ग्वारपाठा का रोपण किया जाना चाहिये।
- उपयुक्त समतल मिट्टी वाली भूमि होने पर आम, जामुन, कटहल, अनार, नीबु, संतरा, मौसम्मी के साथ अनपयोगी बंजर भूमि वाले वानिकीध्उद्यानिकी सभी प्रकार के पौधे लगाये जा सकते है।
- छत्तीसगढ़ की जलवायु एवं पौधे की बहु उपयोगिता को देखते हुए खेतों की मेंड़ पर मुनगाध्सहजन के पौधों को अवश्य लगाना चाहिए।

### कन्टूर ट्रेन्च का निर्माण

जलवायु परिवर्तन के कारण अत्याधिक या तीव्र वर्षा होने के कारण मिट्टी कटाव साधरणतः हमारें खेतों को नुकसान पहुचाते है । कन्टूर ट्रेन्च का निर्माण से मिट्टी क्षरण को सीमित एवं भूजल संरक्षण किया जाता है। 3 मी. x 0.5मी. x 0.5 मी. के श्रृखलाबद्ध तरीके से कन्टूर रेखा पर ट्रेन्च बनाकर मिट्टी क्षरण को सीमित किया जा सकता है। यह रिज क्षेत्र के उपचार के लिये सबसे किफायती और सरल तरीका है। इसमें भूमि की ढलान को ध्यान में रखकर निर्मित किया जाता हैं,

- 10 प्रतिशत से 25 प्रतिशत ढलान पर मिट्टी के कटाव को रोकने के लिये समान गहराई वाले कन्टूर ट्रेन्च का निर्माण, गैर कृषि योग्य पहाड़ी (रिज) क्षेत्रों में किया जाता है।
- चयनित भूमि में कलस्टर रूप से कार्य करें, बंजर भूमि में ज्यादा कार्य की प्राथमिकता देना चाहिए।

- रिचार्ज जोन में कंटूर की रेखा में पहाड़ियों से बहते वर्षाजल की गति को धीमा करने एवं मृदा अपरदन की दर को प्रभावी नियंत्रण हेतु वृहदस्तर पर कन्टूर ट्रेन्च का निमार्ण किया जा सकता है।
- इस सरंचना के निमार्ण से टेन्च में एकत्रित जल का भूमि में रिसाव के फलस्वरूप भूमिगत जलस्तर में वृद्वि एवं फसलों के उत्पादन हेतु पर्याप्त नमी की उपलब्ध्ता सुनिश्चित होती है।
- इसके साथ साथ पहाड़ियों से तेज गति से आने वाले वर्षाजल के प्रवाह में अवरोध उत्पन्न होने के कारण अचानक बाढ़ जैसी स्थिति का सामना भी नहीं करना पड़ता।
- यहॉ ध्यान दिया जाना चाहिये कि यह भूमि ढलान के साथ–साथ खेती के लिये उपयुक्त नहीं है तभी इसका चयन किया जाये ।

### समोच्य बॉध (कन्टूर पाल)

समोच्य बांध का निर्माण से मिट्टी क्षरण को सीमित एवं भूजल संरक्षण किया जाता है। रिज पहाड़ी क्षेत्रों में जहॉ ढलान 3 से 10 प्रतिशत तक है समोच्य बॉध बनाकर पक्के एवं सुरक्षित जल प्रवाह के उपयुक्त स्थान का निर्माण बीच–बीच में आवश्यकता अनुसार करना चाहिये।

- समोच्य बॉध की उॅचाई 0.75 मीटर, 1.0 मीटर गहराई, 0.6 मीटर चौड़ाई रखा जा सकता है।
- समोच्य बॉध केनीचे अनिवार्य रुप से वृक्षारोपण एवं मेड़ पर बारहमासी घास की प्रजातियों, चारा और वनस्पति लगायें। इससे ना केवल भूमि का स्थायी संरक्षण बल्कि जानवरों के चारा हेतु नेपियर–बाजरा, हाइब्रिड घास गिनी घास, लोबिया, ग्वार, बरसीम आदि मिलेगा।

### बोल्डर चेक (पत्थर के छोटे बांध)

पहाड़ी से घाटी तक जल निकासी के साथ जल संरक्षण उपचार के लिए बोल्डर चेक बनाये जाते है। इन संरचनाओं से मिट्टी के कटाव को रोकने की प्रक्रिया तथा भूजल स्तर को बढ़ाने में सहयोग मिलता है। बोल्डर चेक के कारण क्षेत्र में मिट्टी संरक्षित होती है तथा वर्षा जल के साथ बहकर आनेवाली मिट्टी बेहद उपजाऊ होने के साथ – साथ विभिन्न खनिजों से भरपूर होने के कारण, कृषी भूमि की उपजाऊता एवं उत्पादकता में वृद्वि करती है। बोल्डर बांध वहां बनाने चाहिए जहां पर बोल्डर जरूरत के आकार में बडे पैमाने पर उपलबध हो।

- बोल्डर चेक श्रृंखलाबद्व रूप से बनाने चाहिए।
- बांध की उंचाई जमीन स्तर से 50 सेमी से 1 मी रखना चाहिए।
- नांव के आकार के 30 सेमी हल्की गहराई बनाकर बोल्डर का बांध बनाये।
- क्रमशः छोटे पत्थर को बीच में एवं बडे पत्थर को उसके पश्चात् लगाते हुए समलम्बकार आकार बनावें।
- उपरी ढलान 1:1 से कम न रखें तथा निचले हिस्से की ढलान 3:1 से कम न रखे।
- बांध के उपरी भाग की चौडाई 50–60 सेमी रखें।

### मिट्टी के बांध

मिट्टी के बांध विशेष रूप से उन क्षेत्रों के लिए महत्वपूर्ण हैं जहां भूजल स्रोतों की कमी है और जहां नहर के माध्यम से सिंचाई करने की सुविधा नहीं है। जलग्रहण की मुख्य धाराओं पर बनाए गए मिट्टी के बांध कम लागत की संरचना है, जो रन ऑफ को रोकने और मिटटी के कटाव को नियंत्रित करने में सहायता देते है।

- अधिकतम 4.65 मीटर ऊंचा हो, ऊपरी धारा तथा निचली धारा पर 3:1 और 2: 1 की ढलान तथा 2 मीटर ऊपरी चौड़ाई वाले मिट्टी के बांध हो।
- बांध के कोर दीवार को पूरे जल–भराव तक उठावें।

- निकासी नाली का ढलान बहुत अधिक नहीं हो।
- बांध के नीचे ओर चट्टानध्पत्थर का उपयोग करना चाहिए जिससे रिसाव की समस्या से बांध को नुकसान न हो।
- बांध के बाहरी भाग पर चिकनी मिट्टी का उपयोग न करें जो कि अत्याधिक धुल कर बह जाता है।
- स्लोप के स्थायित्व के लिए घास लगाए

### चेकडैम

भूजल दोहन से खेती का चलन बढ़ता जा रहा है। कई क्षेत्रों में भूजल का स्तर कॉफी नीचे चला गया है। सुखा व खंडित वर्षा से भूजल के उपर निर्भरता और भी बढ़ जाती है। इन परिस्थितियों में भूजल स्तर को रिचार्ज करने वाली संरचना को बढ़ावा देना होगा। चेकडैम बहते पानी को संरक्षित कर भूजल स्तर को रिचार्ज करने का कार्य है। इसमें पक्की संरचना बनाने से पूर्व संरचना की डिजाईनिंग अनिवार्य है।

- चयनित स्थान के ऊपर की ओर के क्षेत्रों में नाला उपचार हेतु कार्य योजना बनाएं।
- वर्ष भर पानी बहने वाले नाले ( कम से कम 8–10 माह) में ही चेकडैम की कार्य योजना बनाएं।

### खेतों की मेढ़ों का निर्माण

कृषकों के खेतों की मेढ़ों का वर्षा जल से हुए फूटान को रोकने व जल प्रवाह को नियंत्रित करने हेतु मिट्टी के बॉध बहुपयोगी सरंचना होती है। आर्थिक कमी व तकनीकी जानकारी के अभाव में इस फूटान से कृषक प्रतिवर्ष फसल लेने के समय आवश्यकतानुसार मिट्टी एवं वनस्पतिक झाड़ियों के माध्यम से सरंचनाए बनाता है, परन्तु यह सरंचना भूमि कटाव रोकने हेतु अपर्याप्त होती है। खेतों की मेढ़ों का निर्माण से तेज जलप्रवाह से जल के साथ उपजाऊ मिट्टी के परिवहन पर रोक लगती है। इससे भूमि कटाव में कमी, मृदा उर्वरकता में वृध्दि के परिणामस्वरूप उत्पादन में वृध्दि होती है।

- ऐसे पौधे, प्रजातियॉ जो सीधे वृद्धि करने एवं कम छायादार हों ऐसे पौधों प्रजातियों का चयन किया जावे, ताकि फसल उत्पादन प्रभावित न हो।
- ऐसे पौधो का चयन किया जावे जो खेत की फसल को प्रभावित न करें, सामान्यतः दलहनी प्रजातियों का चयन हो।
- ऐसे पौधों का चयन किया जावे जो सूखा रोधी हो एवं फसलों को ठंडी एवं गर्म हवाओं से बचाने हेतु वायु अवरोधक (बिन्ड–ब्रेक) का कार्य करें।

### खेततालाब / डबरी

खेत तालाब या खोदा गया तालाब बनाने का मुख्य उद्देश्य वर्षा के पानी को रोकना, भूमिगत जलस्तर बढ़ाना, फसलों की सिंचाई, पशुओं के लिए पानी उपलब्ध कराना एवं आजीविका को बढ़ाना है।

- पानी बहाव की धारा की पहचान करे और पानी के आवकधनिकासी का ध्यान रखें।
- इनलेट के पहले गाद को तालाब में जाने से रोकने के लिए गाद गड्ढा बनाए जिससे गाद तालाब में ना जा सके व भराव क्षेत्र बना रहे।

- तालाब का जलग्रहण का क्षेत्र मानक के आधार पर लेना चाहिए व तालाब की गहराई कम से कम 3 मीटर की हो।

### सामुहिक कुआँ

परपंरागत रुप से सुखा व अल्प वर्षा अथवा दूसरी फसल के लिए कुआँ का प्रयोग किया जाता रहा है। जलवायु परिवर्तन देखते हुए कुऐं से भूजल के दोहन में सावधानी बरतनी आवश्यक है। जैसे कि व्यक्तिगत कुंआ के स्थान पर समुह द्वारा कुयें का प्रयोग, केवल उपरी स्तर के भूजल का दोहन। कुआँउपयुक्त स्थान पर ही खोदें। कुआँ केलिए चयनित स्थान के ऊपर की ओर रिज क्षेत्र में रिचार्ज हेतु कण्टूर ट्रेंच अथवा परकोलेसन टैंक बनाएं। समान्यतः गोलाकार आकार में खुदाई की जाती है।

- कुआँ काव्यास 1.5 से 4.5 मीटर (5 से 15 फीट) के मध्य होता है। अधिक व्यास के कुए में पानी की अधिक मात्रा भण्डारण की क्षमता होती है।
- जल निकास रेखा क्षेत्र में कुआँ हेतु कार्य योजना बनाएं।
- कुआँ के किनारे फलदार पेड को बढ़ावा दें।
- कुओं की गहराईध्गोलाई, कुआँ बनावट, कुओ से दूसरे कुऐ की स्थान की दूरी आदि के सन्दर्भ में मिट्टी के गठन, बनावट एवं प्रभाव की त्रिज्या के आधार पर निर्धारण करना चाहिए।
- कम से कम ऊपर के 3.0 मीटर (10 फुट) पत्थर, रेत अथवा कंक्रीट मसाले से जलरोधक परत बनानी चाहिये।

### भूमि विकास

गांव का बंजर जमीन, विशेष रूप से वंचित वर्ग की गैर कृषि योग्य भूमि में उपलब्ध संसाधनों के बेहतर उपयोग के लिए विभिन्न तरह के तकनीक व प्रक्रियाओं को अपनाया जाता है। भूमि का समतलीकरण, 30.40 माडल एवं तालाब के गाद का इस्तेमाल से भूमि विकास किया जाता है। इस तरह के विकास कार्य के लिए मेड़बंधी एवं बागवानी साथ में लेने से ज्यादा लाभ होगा।

### कंपोस्ट गडडे

कंपोस्ट जैविक सामग्री से निकले हुए सभी तरह के कचरे को उच्च गुणवत्ता के उर्वरक में बदलने का प्रभावी तरीका है। गांव में कृषि अवशेष एवं अपशिष्ट को ध्यान में रखकर कार्य योजना बनाएं।

## आजीविका बढ़ाने हेतु जलवायु अनुकूल रणनीति

### कृषि आधारित आजीविकाः

व्यक्तिगत संपत्ति जल सिंचाई के लिए संरचना (कृषि के लिए तालाब), भूमि विकास (भूमि स्तर में सुधार), और मृदा तथा नमी सुरक्षित करने वाले उपाय (जैसे की 30 ग् 40 मॉडल), वनस्पति उपायों (जैसे की वृक्षारोपण ), इत्यादि की योजना बनाई जा सकती है जिससे की उस क्षेत्र की प्राकृतिक संसाधनों की वहन क्षमता और उत्पादकता पर अनुकूल प्रभाव पड़े। इससे परिवार एकल खेती से दोहरी खेती की ओर बढ़ सकें। इसी तरह कुछ कार्य जैसे की ट्रेनचिंग, गली प्लागिन इत्यादि की योजना बनाई जा सकें जिसे की प्राथमिक प्राकृतिक संसाधनों की क्षय की जॉच हो सकें। सामुदायिक जमीनों पर तथा वैसे परिवारों के लिए जिनके पास आवश्यक भूमि है वहां फलदार वृक्षों की वृक्षारोपण योजना बनाई जा सकती है।

**कृषि उत्पाद आधारित आजीविकाः**

ऐसा देखा गया है की बकरी पालन, मुर्गीपालन, इत्यादि ग्रामीण परिवारों के लिए आजीविका का एक महत्वपूर्ण साधन है। लेकिन आधारभूत संरचना आवश्यक जुड़ावों के अभाव में ये ग्रामीण परिवार पशुपालन को अपनी आजीविका का स्थिर स्त्रोत नही बना पाते। ऐसे परिवारों के लिए व्यक्तिगत संपत्ति जैसे की बकरी घर, मुर्गी घर, और पशु घर इत्यादि बने की योजना बनाई जा सकती है। कृषिहीन परिवारों के लिए यह अत्याधिक महत्वपूर्ण है।

**एन.टी.एफ.टी. आधारित आजीविकाः**

कई परिवार ऐसे है जो आजीविका के तीसरे श्रोत के रूप में एन.टी.एफ.टी. पर निर्भर है। भूमिहीन परिवारों के लिए यह आजीविका का यह महत्वपूर्ण स्त्रोत है। ईधन के लिए इस्तेमाल होने वाले लकड़ियों, तसर और लाख पैदा करने वाले वृक्षों के वृक्षारोंपण से इन परिवारों की आय बढाई जा सकती है। आधारभूत संरचनात्मक सहयोग का जैसे की मछली सुखाने की जगह, सामुदायिक केन्द्र, आदि का योजना भी ग्रामीण की आजीविका आवश्यकता को पूरा करने के लिए बनाई जा सकती है।

सामुदायिक कार्यों के अतिरिक्त गांव के वंचित पिछड़े परिवारों के लिए मनरेगा के अन्तर्गत अधिकतम 3 लाख रुपये की परिसम्पत्ति निर्माण का प्रावधान है। उपरोक्त वर्णित गतिविधियों के माध्यम से ग्राम पंचायतें महात्मा गॉधी नरेगा की जलवायु परिवर्तन अनुकूल संरचनाओं की कार्य योजना बना सकते है। इस प्रकार ग्रामीण परिवारों की जलवायु परिवर्तन रोधी क्षमता बढ़ानें में मनरेगा का महत्पूर्ण योगदान हो सकता है।

## संग्लंक-1

### छत्तीसगढ़ की मुख्य फसल पद्धतियाँ

छत्तीसगढ़ राज्य को रूप से देश में चावल के कटोरे के रूप में पहचाना जाता है क्योंकि चावल इस राज्य की प्रमुख फसल है और लगभग कुल क्षेत्र 69.7 प्रतिशत में खरीफ में चावल बोया जाता है। लेकिन सूखे से सामान्य वर्ष में अन्य राज्यों और औसत राष्ट्रीय उत्पादकता की तुलना में यहाँ का चावल उत्पादन 9.2 से 16.5 क्वी./हे. की दर बहुत कम है। छत्तीसगढ़ की फसल और फसल की तीव्रता मिट्टी के प्रकार पर निर्भर करती है और उसी प्रकार सिंचित क्षेत्रों में उपयुक्त फसल पद्धति पर निर्भर करती है

फसल क्षेत्र के आधार पर प्रमुख फसल पद्धति छत्तीसगढ़ के तीन कृषि जलवायु क्षेत्रों में इस प्रकार है–

#### छतीसगढ़ का मैदानी क्षेत्र

| क्रमांक | फसल | फसल पद्धति |
|---|---|---|
| 1 | धान | पड़ती |
| 2 | धान | उतेरा (लाखड़ी/अलसी) |
| 3 | धान | अलसी/चना/मसूर/गेहूँ/सरसों/कुसुम |
| 4 | पड़ती | अलसी/चना |
| 5 | अरहर | पड़ती |
| 6 | उर्द | पड़ती |
| 7 | कोदो–कुटकी | पड़ती |
| 8 | सोयाबीन | गेहूँ/अलसी/सब्जी |
| 9 | मक्का | सरसों/तोरिया/सब्जी |

#### बस्तर का पठार क्षेत्र

| क्रमांक | फसल | फसल पद्धति |
|---|---|---|
| 1 | धान | पड़ती |
| 2 | धान | पड़ती/अलसी/चना/सब्जी |
| 3 | धान | अलसी/चना/सब्जी |
| 4 | मक्का | सरसों/तोरिया/सब्जी |
| 5 | पड़ती | कुल्थी |
| 6 | कंद वाली फसल | पड़ती |
| 7 | कोदो–कुटकी | पड़ती |

## उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र

| क्रमांक | फसल | फसल पद्धति |
|---|---|---|
| 1 | धान | पड़ती |
| 2 | धान | गेहूं / मटर / सब्जी / चना / अलसी |
| 4 | अरहर | पड़ती |
| 5 | मक्का | पड़ती |
| 6 | मक्का | सरसों / तोरिया / सब्जी |
| 7 | पड़ती | रामतिल / कुल्थी / सरसों |

## प्रभावी खेती प्रणाली

- भारतीय कृषि का भविष्य कम संसाधन वाले कृषक परिवारों एवं विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्र के लिए उपयुक्त उचित कृषि के विकास पर निर्भर करता है
- कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता खेती प्रणाली से प्राप्त की जा सकती है।
- कृषक सामाजिक आर्थिक स्थितियों, कृषक की आवश्यकताओं एवं दशकों के अनुभव व गहरी समझ के आधार पर छत्तीसगढ़ मे निम्नांकित प्रभावी खेती प्रणाली की पहचान की गई है

## सिंचाई व्यवस्था के आधार पर छत्तीसगढ़ की खेती प्रणालियों का वर्गीकरण

**1) एक फसली वर्षा आधारित प्रणाली**

चावल–पड़ती , कोदो / कुटकी–पड़ती

अरहर–पड़ती, उरद–पड़ती

**2) द्विफसली वर्षा आधारित प्रणाली**

चावल–उतेरा (ज्यादातर लाखड़ी एवं आंशिक रूप से अलसी)

चावल–चना, मक्का–तोरिया, चावल–अलसी और चावल–गेंहू (आंशिक रूप से)

**3) द्विफसली सिंचित प्रणाली**

चावल–गेंहू, चावल–चावल, चावल–सब्जियाँ, सब्जियाँ–सब्जियाँ, चावल–चना (आंशिक रूप से )

चावल–सरसों

**4) उभरती कृषि की प्रणालीयां**

सोयाबीन – गेंहू, चाँवल–सब्जी

सब्जियाँ–सब्जियाँ

## छत्तीसगढ़ में प्रभावी विभिन्न खेती की प्रणालियाँ

| क्रमांक | फसल प्रणाली मोडल | कृषि की परिस्थिति | फसल प्रणाली को अपनाना | | | कृषको की तैयारी |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | **छत्तीसगढ़ का मैदानी क्षेत्र** | **बस्तर का पठार क्षेत्र** | **उत्तरी पर्वत क्षेत्र** | |
| फसल आधारित प्रणाली | | | | | | |
| 1 | धान लाखड़ी- ( उतेरा) | भारी मृदा (वर्षा आधारित) | √ | X | X | .1धान आधारित फसल प्रणाली मे लाखड़ी कि बोवाई खेत कि नमी के उपयोग हेतु किया जाता है.<br>.2चावल और लाखड़ी भोजन में अनाज और दाल के उद्देश्य की पूर्ति करते हैं ।<br>.3धान का पैरा एवं लाखड़ी की भूसी पशुओं के चारे रूप मे उपयोग की जाती है। |
| 2 | धान ; दलहन गेंहू-तिलहन/ | मेड़ वाली भरी मृदा वर्षा ) (आधारित | √ | X | √ | 1- उत्तर पर्वतीय क्षेत्र ने चावल -एवं मैदानी भाग मे चावल (वर्षा आधारित) गेंहू-तिलहन/दलहन<br>2 भोजन की पूर्ति करते हैं मसूर/चना/ गेंहू-चावल .<br>3 भूसी का पशु चारे रूप मे उपयोग की जाती है।/चना पैरा/चावल . |
| 3 | चावल सब्जीयां- चावल गेंहू- चावल चावल- | आंशिक या निश्चित रुप से सिंचित धान का खेत | √ | X | √ | 1ण अच्छे बाजार के उपलब्ध होने से शहरी क्षेत्र के आसपास के किसान चावल के बाद - यॉं उगाते हैंसब्जि<br>2ण चावल गेंहू का पैरा पशु चारे रूप मे उपयोग की जाती है।<br>3ण नहर सिंचित क्षेत्र एवं बिजली अनुदान प्राप्त नलकूप से सिंचित क्षेत्र मे चावलगेंहू - लोकप्रिय है । |
| 4 | अरहरसोयाबीन / आधारित प्रणाली | बिना मेड़ वाली भारी मृदा वर्षा ) (आधारित | √ | X | √ | छ.ग. मैदान एवं उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र ने अच्छे जलनिकास वाली उच्च मृदा मे अरहर लोकप्रिय है जबकि मैदानी भाग मे बिना मेड वाली भारी मृदा मे सोयाबीन लोकप्रिय है |

| क्रमांक | फसल प्रणाली मॉडल | कृषि की परिस्थिति | फसल प्रणाली को अपनाना | | | कृषको की तैयारी |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | छत्तीसगढ़ का मैदानी क्षेत्र | बस्तर का पठार क्षेत्र | उत्तरी पर्वत क्षेत्र | |
| फसल आधारित प्रणाली | | | | | | |
| 5 | कोदो रामतिल/उरद/ कुटकी-कुलथी की एकल कृषि/ | बिना मेड़ वाली हल्की मृदा उच्च ) भूमि वर्षा आधारित ( | √ | √ | √ | 1. तीनों कृषि जलवायु क्षेत्र के हल्की मृदा मे उरद की खेती की जाती है जबकि जनजाति क्षेत्र के ढलान वाली व असमतल मृदा मे रामतिल एवं कुलथी उगाई जाती है। |
| 6 | अल्पावधि मक्का-सब्जियाँ/ तोरिया | बाड़ी (घर की खेती) | √ | √ | √ | 1. छ.ग. के ग्रामीण क्षेत्रों मे घरेलू कृषि प्रचलित है। (बाड़ी) रता है।एकड़ जो घर के पिछवाड़े मे हो रइसका क्षेत्रफल लगभग . ३ मुख्यतः घरेलू मजदूरों द्वारा कृषि कार्य की जाती है । . |
| फसल एवं पशुपालन प्रणाली | | | | | | |
| 1 | फसल 2) दुधारू पशु +से ( 3 | छोटे सेसीमांत कृषक | √ | ? | √ | १ त्रों को छोडकर सभी गांवो मे आमयह जनजाति बहुल अंचल के अंदरूनी क्षे है । २की किया जाता है जबकि सुदूर क्षेत्रों मे शहर से जुडे क्षेत्र मे दूध को बि . इसका घरेलू उपयोग होता है । |
| 2 | फसल शुष्क पशु + | छोटे से सीमांत कृषक | √ | √ | √ | १समान्यतः शुष्क पशुओं को कृषक खेती के कार्य एवं बैल गाड़ी के लिए . उपयोग करते हैं । |
| 3 | बाड़ी मे फसल कुक्कुट पालन+ तों तालाबएवं ना+बकरी पालन+ मे मछली पकड़ना | छोटे से सीमांत कृषक | √ | √ | √ | १. घरेलू उपयोग हेतु बाड़ी मे फसल; कुक्कुट पालन एवं मछली पकड़ना । |
| 4 | फसल वनोपज संग्रहण +(खरीफ) एवं विक्रय;शहद एवं लाख संग्रहण ;; जलाऊ एवं इमारती लकड़ी इत्यादि | जनजाति बहुल क्षेत्र | ? | √ | √ | १आय के लिए वनोपज संग्रहण व विक्रय । भोजन के लिए फसल एवं. |

# संभावित फसलें

प्रायोगिक परिणामों और क्षेत्रीय अनुभवों के आधार पर संभव संभावित फसलों, जो छत्तीसगढ़ की विभिन्न परिस्थितियों में उगाया जा सकता है, निम्नलिखित हैं

**1) बिना मेड़ वाली हल्की मृदा (वर्षा आधारित )**

| | |
|---|---|
| अनाज | मक्का, रागी |
| दलहन | उरद, मूंग, कुलथी |
| तिलहन | तिल, मूँगफली, तोरिया, अरंड |
| कंदीय फसलें | अरबी, जिमिकन्द, तीखुर, कसावा, शकरकंद |
| मसाले | हल्दी, अदरक |
| अन्य | सब्जियाँ |

**2) मध्यम से भारी बिना मेड़ वाली हल्की मृदा (वर्षा आधारित)**

**खरीफ**

| | |
|---|---|
| अनाज | कोदो, रागी, मक्का |
| दलहन | उरद, अरहर, अरहरसोयाबीन |
| तिलहन | सोयाबीन, मूँगफली एवं सूरजमुखी |
| कंदीय फसलें | अरबी, जिमिकन्द, तीखुर, कसावा, शकरकंद |
| मसाले | हल्दी, अदरक |
| अन्य | कपास एवं सब्जियाँ |

**रबी**

| | |
|---|---|
| अनाज | गेंहू |
| दलहन | चना, लाखड़ी, ऊरद, मूंग, मटर, मसूर, बरबट्टी |
| तिलहन | कुसुम, तोरिया, अलसी |
| कंदीय फसलें | अरबी, जिमिकन्द, तीखुर, कसावा, शकरकंद |
| मसाले | मेथी, धनिया, करायत |
| अन्य | सब्जियाँ |

**3) चावल के खेत के मेड़ों पर कृषि**

| | |
|---|---|
| तिलहन / दलहन | अरहर, तिल उरद, बरबट्टी, सेम |
| कंदीय फसलें | अरबी |
| औषधीय | नींबू घाँस |
| चारा | दीनानाथ, सूडान नैपियर एम० पी०, चारी |
| अन्य | फल / वानिकी वृक्ष |

**4) मेड़ वाली वर्षा आधारित (मध्यम से भारी मृदा)**

**खरीफ**

| | |
|---|---|
| अनाज | चावल |
| दलहन | सोयाबीन एवं सब्जियाँ (मेड़ों को हटा कर वृहद स्तर की खेती जल निकास उपलब्ध कराना) |

**रबी**

| | |
|---|---|
| अनाज | गेंहू |
| दलहन | चना, मटर, मसूर, लाखड़ी |
| तिलहन | कुसुम, अलसी, सरसों |
| मसाले | मेथी, धनिया, करायत |

**5) सिंचित अवस्था (विभिन्न प्रकार की मृदा)**

**खरीफ**

| | |
|---|---|
| अनाज | चावल, मक्का |
| तिलहन | सोयाबीन, सूरजमुखी, अरंड, मूँगफली |
| सब्जियाँ | सभी खरीफ की सब्जियाँ |
| अन्य | गन्ना, चारा, औषधीय एवं सुगंधित पौधे |

**रबी**

| | |
|---|---|
| अनाज | गेंहू, मक्का |
| तिलहन | सरसों, सूरजमुखी, अलसी, शंकर अरंड, मूँगफली, कुसुम |
| दलहन | चना, मटर, मसूर, लाखड़ी, राजमा, बरबट्टी |
| सब्जियाँ | प्याज, आलू, टमाटर, बैगन, मिर्च, कद्दूवर्गीय एवं गोभी वर्गीय सहित रबी की सब्जियाँ |
| चारा | बरसीं, लुसेर्न घास |
| अन्य | गन्ना, औषधीय पौधे एवं मसाले |

# फसल उत्पादन एवं तीव्रता बढ़ाने हेतु फसल प्रबंधन रणनीति

- छत्तीसगढ़ में कृषि मे आत्मनिर्भरता फसल की संख्या सहित फसल की गहनता और विविधीकरण के साथ संभव है।
- इस रणनीति के अंतर्गत फसल प्रबंधन मशीनीकरण, संरक्षण कृषि, बाजार अधोसंरचना, सामाजिक जागरूकता एवं सूखा तथा सिंचाई प्रबंधन सम्मिलित हैं।

| मुद्दे | रणनीति |
|---|---|
| **फसल प्रबंधन एवं किश्में** | |
| 1. कृषक अपने परंपरागत विधि एवं किश्मों से चाँवल उगा रहें हैं। चाँवल एवं अन्य फसलों जैसे मक्का, गेंहू, तिलहन एवं दलहन के अनुशंसित किस्मों के बीज कृषकों को उपलब्ध करना चाहिए | राज्यस्तर पर मे गुणवत्ता बीज उत्पादन योजना बनना चाहिए।<br>फसलों के बीज पंचायत स्तर पर अनुदान पर उपलब्ध होने चाहिए।<br>कृषकों के लिए बीज उत्पादन प्रशिक्षण का आयोजन करना चाहिए।<br>बीज विनिमय कार्यक्रम के माध्यम से बीज प्रतिस्थापन अनुपात में वृद्धि होनी चाहिए। इस कार्यक्रम के अंतर्गत कोदो, कुटकी, रागी, मक्का, लाखड़ी, अलसी, गेंहू, तोरिया इत्यादि को शामिल करना चाहिए। |
| **मुद्दे** | **रणनीति** |
| **फसल प्रबंधन एवं किश्में** | |
| 2. फसल विविधिकरण कार्यक्रम के तहत भी सभी फसलों की उत्पादकता बहुत कम है। | उत्पादकता बढ़ाने हेतु कृषको को उन्नत कृषि–तकनीक के बारे मे बताना चाहिए। छोटे, मध्यम और बड़ेकिसानों को ध्यान में रखते हुए पैकेज तैयार करना चाहिए।<br>सभी फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए जन अभियान जिसमें जागरूकता शिविर, एफ एल डी और प्रशिक्षण शामिल हैं की आवश्यकता है।<br>फसल विविधीकरण के लिए हर ब्लॉक में मॉडल गांव का विकास करना, जिसमें कृषि पद्धति के अवयव जैसे कुक्कुटपालन, बकरीपालन, डेयरी, मत्स्यपालन आदि शामिल हों। |
| 3. चावल के बड़े जोतों में फसल की गहनता भी संभव है, यह क्षेत्र अछूता है, जिसके लिए तत्काल ध्यान देने की जरूरत है। | बड़े पैमाने पर खेती में धान के मेड़ों का उपयोग लक्ष्य–उन्मुख ढंग से किया जाना चाहिए।<br>बंड की खेती के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया जाना चाहिए। अरहर, चारा बेहतर विकल्प हो सकते हैं। |

| मुद्दे | रणनीति |
|---|---|
| **फसल प्रबंधन एवं किश्में** | |
| 4 निम्न या कम लागत पर उत्पादकता बढ़ाने के लिए आईएनएम और आईपीएम को बढ़ावा देना। | जैविक खाद और जैव उर्वरकों के उपयोग को बढ़ावा देना चाहिए।<br>कार्बनिक खाद–उर्वरक, वर्मीकंपोस्ट, बीजीए, राइजोबियम, एजोस्पिरिलम, एजोटोबेक्टर, एवं आईपीएम ( फेरोमेन ट्रेप , मित्र कीट व कीटव्याधि नियंत्रण के अन्य जैविक साधन) के बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए की उत्पादन इकाई स्थापित की जानी चाहिए। |
| 5. कृषि वानिकी प्रणाली के विकास के लिए भाटा और बंजर भूमि का उपयोग फसल गहनता कार्यक्रम के तहत किया जाना चाहिए। | कृषि उत्पादक और औषधीय पौधे के विकास के लिए बड़े पैमाने पर कार्यक्रम को राज्य सरकार द्वारा समूह में या सहकारी खेती मोड में कार्यान्वित करने की आवश्यकता है। |
| **मुद्दे** | **रणनीति** |
| **मशीनीकरण** | |
| 6. संरक्षित नमी के उपयोग और खरीफ व रबी फसलों के बीज डालने के लिए कृषि मशीनीकरण आवश्यक है। | कस्टम हायरिंग सेवाओं के माध्यम से मशीनीकरण को किसानों के दरवाजे तक उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इस उद्देश्य से शिक्षित बेरोजगार युवाओं को आसान ऋण उपलब्धता के जरिए प्रेरित किया जाना चाहिए। |
| 7. राज्य की कृषि अधोसंरचना चावल की खेती के आधार पर विकसित की गई है। अन्य कृषि उत्पादों जैसे सब्जियां, औषधीय पौधे, वनोपज आदि के लिए कोई प्रसंस्करण इकाई स्थापित नहीं की गई है। | अलग–अलग फसलों के उपज के उपयोग हेतु प्रसंस्करण इकाई की स्थापना के लिए निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, अन्यथा, उचित बाजार की कमी के कारण फसल विविधीकरण कार्यक्रम बंद हो जाएगा। |
| **बाजार अधोसंरचना एवं सामाजिक जागरूकता** | |
| 8. फसल विविधीकरण कार्यक्रम के तहत किसान को अपने उत्पाद की कीमत भी नहीं मिल रही है | उत्पादन खरीदने के लिए पंचायत, सहकारी क्षेत्र और निजी क्षेत्र को मजबूत किया जाना चाहिए। यहाँ पंचायत स्तर पर आगे की बिक्री या उत्पाद की खरीद के लिए भी बाजार प्रणाली और भंडारण की सुविधा होनी चाहिए।<br>परीक्षण के आधार पर अनुबंध की खेती की जा सकती है।<br>ग्राम स्तर तक परिवहन की सुविधा दुरुस्त होना चाहिए। |
| 9. राज्य में चावल और कुछ दलहन फसलों के अलावा कोई मार्केटिंग इंफ्रास्ट्रक्चर विकसित नहीं किया गया है। | राज्य में राज्य निर्यात निगम की स्थापना होनी चाहिए। निगम भंडारण के लिए अवसर प्रदान करेगा, बागवानी, वानिकी, वन उत्पाद, मशरूम, डेयरी, मुर्गी – पालन, पशु चिकित्सा आदि सहित सभी परंपरागत और नई फसलों के लिए प्रसंस्करण और राज्य के अंदर विपणन और बाहर की ओर मार्केटिंग मुहैया कराएगा। अन्यथा मार्केटिंग फेडरेशन को इस उद्देश्य के लिए मजबूत किया जा सकता है। |

| मुद्दे | रणनीति |
|---|---|
| बाजार अधोसंरचना एवं सामाजिक जागरूकता | |
| 10. फसल विविधीकरण और गहनता कार्यक्रम के लिए गहन जागरूकता शुरू की जानी चाहिए। | हर ब्लॉक मे एक आदर्श ग्राम विकसित करना चाहिए। सफलता की कहानी के दस्तावेज तैयार करें। विभिन्न फसलों के सर्वोत्तम पैकेज के लिए ऑडियो–विजुअल सामग्री तैयार करें। |
| 11. सूखा वर्ष में विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में काफी कमी आई है। सूखा के प्रभाव को कम करने के लिए नियोजन आवश्यक है । | चर्चा के माध्यम से आकस्मिक योजना तैयार करने की आवश्यकता है। खरीफ और रबी मौसम के लिए आकस्मिक योजना तैयार करने के लिए एक अलग कार्यशाला/संगोष्ठी आयोजित की जानी चाहिए। |
| 12. वर्तमान में प्रमुख सिंचाई परियोजनाएं सरकारी आधिकारिक निर्भर हैं इसके परिणाम स्वरूप समय में फसल की जरूरत के मुताबिक और वांछित मात्रा में सिंचाई भी उपलब्ध नही हो पाती । | छोटी सिंचाई परियोजनाएं जैसे ट्यूब वेल, डग वेल, चेक डैम, नालाओं में स्टॉप डेम, बहुउद्देश्यीय टैंक, तालाब आदि को प्राथमिकता दी जाए। व्यक्तिगत किसान या किसानों के समूह द्वारा नियंत्रित सिंचाई अधोसंरचना का विकास प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। |

**अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें –**
कृषि विज्ञान केंद्र,ग्राम नेवारी, कवर्धा, छत्तीसगढ़
दूरभाष – 07741–299124, 9826199312

**यह मैनुअल डीएफआईडी–सीसीआईपी के सहयोग से बनाया गया है**